❀ श्री सद्गुरवे नमः ❀

❀ अथ ❀

बोध बयालिस

❀ जिसमें ❀

बीजक प्रमाण से नौ काल, नौ कोश, नौ मन सूत में अरुझे हुये मनुष्यों से अन्तिम विनय सहित मुख्य उपदेश मन्त्र रूप में कहता हूँ कि उभय जाल से रहित नौ गुण सहित निज स्वरूप पर स्थित होने से भूल भ्रम भवसागर पार है और यही असली भजन करना है।



एक कबीरपन्थी साधु

रामलाल दास द्वारा निर्मित।

प्रकाशक फर्म—

बाबू बैजनाथ प्रसाद बुकसेलर

राजादरवाजा वाराणसी-१



* श्री सद्गुरवे नमः *

* बोध बयालिस *

जिसमें नौकाल के बन्धन से मुक्त होने के लिये असल जिन्दा, नकल मुर्दा का विवरण प्रश्न उत्तर सहित है और शब्द कँहरा, कीर्तन, दादरा, गजल, गारी, विनय, प्रभाती आदि सन्तों के बनाये हुये मोह निशा में सोने वाले जीवों को जगाया है।

::

एक कबीर पंथी साधु

रामलाल दास द्वारा निर्मित

प्रकाशक फर्म--

बाबू बैजनाथ प्रसाद बुकसेलर

राजादरवाजा, वाराणसी, २२१००१

चतुर्थ संस्करण ३००० प्रति। || वि० सम्वत् २०३७ ईस्वी सन् १९८१

❀ छन्द ❀

बोध बयालिस है सही, दिल बीच अन्दर कोश[1] है ।
घाटि बाढ़ि रञ्चक नहीं, नाशि रहित निर्दोष है ॥
बद कर्म करना दोष है, निष्कर्म ही निज शेष है ।
रामलाल रहनी गहे, उपकार हित यह भेष है ॥ १ ॥
जड़ से पृथक चैतन्य ही, सत्य वस्तु पारख जानिये ।
मनका जहाँ तक दौर है, सम्बन्ध ही दो[2] ठानिये ॥
मन वृत्तियाँ जब शान्ति हैं, सम्बन्ध छूटे आप है ।
मुक्ति जीवन हो गया, बस येही जपना जाप है ॥ २ ॥

(बीजक साखी १)

जहिया जन्म मुक्ता हता, तहिया हता न कोय ।
छठो तुम्हारी हौं जगा, तू कहाँ चला बिगोय ॥

अर्थ—सद्‌गुरु कबीर साहेब कह रहे हैं कि हे नर जीव ! जब तुम माता के गर्भ से पैदा भया तब तुम दूध पीता था तब तेरे पास नौकाल के बन्धन न थे इसी को जन्म मुक्ता कहते हैं । स्थूल, सूक्ष्म, कारण, महाकारण, कैवल्य ये पाँच देह कच्ची, दया, धैर्य, सत्य, शील, विचार ये पाँच तत्त्व पक्की हंसदेह इसी को छठी देह कहते हैं । इस हंस देह छठी को छोड़कर नौकाल के मानन्दी अहंकार में कहाँ बिगोये जाता है जब तक कच्ची तब तक पक्की की रहनी लेना निज स्वरूप पर स्थित होना यही जन्म मरण दुःख से छुट्टी होना जानिये ।

टिप्पणी १—चैतन्य अविनाशी कोश है । २—खानी बाणी जालादि ।

250

* श्री सद्गुरवे नमः *

(भूमिका)

प्रिय पाठक गण तथा सन्त महात्माओं को मालूम हो कि इस छोटी सी पुस्तक में थोड़ा २ उपदेश हर किस्म का ज्ञान गुण से अबोधी जीवों को चेताया गया है। जिसमें बयालिस दोहा में ग्रन्थ का नाम बोध बयालिस ही रक्खा गया है उसमें गुरु, गुरवा, गुरु के लक्षण व स्वार्थ धर्मार्थ, परमार्थ के अर्थ खोल कर बताया गया है। और कबीर साहेब के मुख्य २ उपदेश व रहस्य जीवनमुक्ति होने के लिये साधु सन्त भक्त के लक्षण १३ दोहा में प्रमाण सहित हैं तृण समान पाँच कौन २ माने हैं और पंच पुनीत वस्तु कौन २ हैं। और चारो युग का जन्म कब २ हुआ ? और दो मुख के बोलने में रामायण के चौपाई भी हैं। दो प्रकार के कारथ दो प्रकार के स्वारथ से बन्धन और पाँचवें परमार्थ से जीव का बन्धन छूटने में प्रमाण सहित उपाय वर्णन, अनेक जोड़ा में फँसे हुये जीवों पर कीर्तन, दस औतार मनुष्य के देह में बताया गया है। मूर्ती का पूजन कब से चला ? क्षत्री के छागुण और दूध खून पीने का विचार किसने किया ? क्या साँच है क्या झूँठ है इसका प्रमाण और जगत का रचने वाला है कि नहीं इसका समाधान ! कबीर

साहेब के कठिन शब्दों का अर्थ व शारङ्ग के नाम ३२ होते हैं सो भी है।

दोहा—छन्द कीर्तन बन्दना, गारी गज़ल कँहरवा।
शब्द दादरा पढ़ि गहै, दोनों छूटि झगरवा ॥ १ ॥
जनम मरण और शुभाशुभ, ये दो झगरा जान।
चाह रहित निज पर रहै, गुरु पद येही ध्यान ॥ २ ॥
जो कुछ त्रुटि ग्रन्थ में, मशीनादि निज भूल।
सज्जन पढ़हिं सुधार लें, महँक उठे यश फूल ॥ ३ ॥
सर्व पारखी सन्तों का चरण रज एक कबीर पन्थी साधु

रामलाल दास।

(भजन)

अबधू छूटि लड़ै सोई बाँका ॥ टेक ॥
गुरु हमारे शब्द विवेकी, शब्दहि गोहने लागा।
सार शब्द वै निश दिन भाखैं, चलै सत्य कै साखा ॥अबधू०॥१॥
सतगुरु मारैं शब्द वाण ले, छूटै भरम कै तागा।
जनम भरण कै संशय नाहीं, खाने को मिलै चाहे फाका ॥अबधू०॥२॥
मन कै घोड़ा ज्ञान कै चाबुक, सुमति ऐड़ दै हाँका।
त्रिगुण राजा को पकरि मंगायो, जीति लियो नौ नाका ॥अबधू०॥३॥
कहहिं कबीर सुनो भाई साधो, जो यह दुरमति हाँका।
सोई सिपाही है मरदाना, लौटि नहीं फिर ताका ॥अबधू०॥४॥

* श्री सद्गुरु पद बन्दना *

बोध बयालिस

हे सद्गुरू मम इष्ट हो, बन्दन करूँ निज गर्ज है ।
त्रय ताप नाशक निज प्रकाशक, आप से यक अर्ज़ है ॥ १ ॥
पारख प्रकाशी सन्त जे, रहते सदा निज शान्ति में ।
उनसे बिनय करता सदा, आते नहीं कभी भ्रान्ति में ॥ २ ॥
तन मन वचन अर्पण करूँ, जो सन्त हैं वर्तमान में ।
त्रयबार करता बन्दगी, ये ध्यान हो गुरू ज्ञान में ॥ ३ ॥
गुरू ज्ञान पाकर मोक्ष हूँ, अज्ञान का नहिं लेश है ।
जीते ही जीवनमुक्त हूँ, जब स्वक्ष रहनी भेष है ॥ ४ ॥
अज्ञान अन्धेरा वस्तु नहिं, सिर्फ चाह सुख को त्यागना ।
सुख ध्यास ही निज ध्वंश हो, बस फेरि जग नहिं आवना ॥ ५ ॥
ज्ञान, पारख, जानना, यह जीव में रहता सदा ।
दुश्मन[1] भगाना चाहिये, वैराग्य का लेकर गदा[2] ॥ ६ ॥
लोक का सुख छोड़ कर, परलोक सुख भी है नहीं ।
बस शेष निज से शान्ति सुख, आना न जाना है कहीं ॥ ७ ॥
रामलाल पर गुरु दया, दोहा बयालिस को कहा ।
श्री साधु गुरु के संग से, बन्धन छुटा निज को गहा ॥ ८ ॥
कबीर, पूरण, पारखी, श्री लाल काशी, इष्ट मम ।
बहु जीव तारे जगत में, सद् रहस्य सेती छूटि यम[3] ॥ ९ ॥

टिप्पणी १—काम क्रोध लोभादि यही दुश्मन हैं। २—शुभ गुण का हथियार यही गदा जानिये। ३—पण्डित पण्डवा, गुरवा, स्त्री, सोना चाँदी के मूर्ती मुर्दा, पाँच यम प्रत्यक्ष हैं।

तातै बन्दत तव चरण, वन्दौ छोर कृपाल ।
भूल मिटी निज घर मिले, हंसा भये निहाल । १० ॥

(१) प्रश्नः—बीजक में छत्तीस जगह काल २ शब्द, आया है तिसमें मुख्य २ काल कौन २ वस्तु अवस्तु उभय जाल हैं ?

उत्तर—बयालिस दोहा के नीचे टिप्पणी में खानी वाणी जाल व नौकाल का विवरण खुलासा में हुआ है ।

दोहा—बोध बयालिस नित पढ़ै, करै सतसंग विचार ।
नौ से रहित निज पर रहै, ते भवसागर पार ॥ १ ॥
विद्यादान वस्त्र दान, अभय[1] दान है तीन ।
चौथी भोजन दान है, करि हैं परम प्रवीन ॥ २ ॥
स्त्री दाम जमीन की, दान किये बहु कोय ।
लेने वाला कहत नहीं, हमैं न चाहिये दोय[2] ॥ ३ ॥
ब्यञ्जन बहुत प्रकार के, भोजन किय भरपेट ।
इसमें नाहीं सब कहत, यही दान है श्रेष्ठ ॥ ४ ॥
चार दान के किये से, जनम मरण नहिं छूट ।
भक्ति दान सद्गुरु दिये, निज घर[3] मिला अटूट ॥ ५ ॥

टिप्पणी १—चोर छिनार डाकू के हिंसादि से प्रजावों की रक्षा करने का नाम अभय दान है ।

२—बिरले सन्त पारखी, कनक कामिनी, हद्द बेहद्द (पाप पुण्य जब दोनों नाशै । तब मेरे पुर पावे बासै ॥) काल अकालादि अनेक जोड़ा को नहीं चाहते बाकी सब तो नौ काल या सात काल में फँसे ही हैं ।

३—अपना चैतन्य स्वरूप ही निज घर अटूट है ।

निर्पक्षी[1] को भक्ति है, निर्मोही को ज्ञान।
निरद्वन्द्वी को मुक्ति है, निर्लोभी निरबान ॥ ६ ॥
सद्गुरु सद्गुरु सब कहै, नौ[2] से रहित न होय।
भूसी कूटब जानिये, गये अपन पौखोय ॥ ७ ॥
पूरा साहेब जानिये, नौ[3] से न्यारा होय।

१—नौकाल का पक्ष छोड़ नौ गुण को धारग करै और स्वस्वरूप पर स्थित होय वही निर्पक्षी भक्त मुक्त है।

२—बीजक में ३६ जगह काल २ शब्द आया है इसलिये नौकाल का अर्थ थोड़े में वर्णन किया जाता है, जैसे—काल अकाल प्रलय नहीं, तहाँ सन्त बिरले जाहिं ॥ हिण्डोल ॥ सन्तो जागत नीन्द न कीजै ॥ काल न खाय कल्प नहि व्यापैं, देह जरा नहिं छीजै ॥ शब्द ॥ २ ॥ सन्त ! महन्तो ! सुमिरो सोई ॥ जो काल फाँस ते वाचा होई ॥ शब्द ९० ॥ इस हिसाब से कबीर साहेब कह रहे हैं कि जो सन्त महन्त नौकाल नौकोश नौ मन सूत अरुझे हुये के फाँसते बचा हो वही सन्त महन्त सुमिरन ध्यान पूजने गुरु करने योग्य हैं यही गुरु करने में जानना है और पानी वाणी छान बिचार कर ग्रहण करना है नहीं तो ॥ महन्त महाउत कानूनगोई ॥ इनके मरे मुक्ति न होई ॥ और जो निज स्वरूप को छोड़ कर जड़ मुर्दा ईश्वर, पाथर को पूजते पुकारते हैं या नौकाल में फँसे हैं वही भूसी कूटते हैं यानी सार चैतन्य रूपी चावल पर स्थित न होने से जन्म मरण रूपी दुःख छूटने को नहीं सो जानिये।

३—स्त्री दाम जमीन। झगड़े का जरि तीन ॥ स्त्री के बारे में रावणादि मारे गये, जमीन के बारे में कौरवों आदि मारे गये, दाम के बारे में अनेकों मारे जाते हैं। जाति काल जमात काल, मेला ठेला महाकाल ॥ जैसे बनिया के दुकान पर जाकर माँगो कि हमैं एक किलो चारो वरण के जाति दे दो तो नहीं मिलैगा। फिर बनिया से कहो कि हमें एक किलो दामाद बहनोई आदि दे दो तो नहीं मिलैगा

नौ गुण[1] को धारण करे, सद्गुरु कहिये सोय ॥ ८ ॥

फिर बनिया से कहो कि हमैं एक किलो ईश्वर ब्रह्म शैतानादि दे दो तो नहीं मिलैगा इसलिये तीनों अवस्तु, आकाशवत मानन्दी मात्र जानिये मिर्च हल्दी आदि वस्तु है यह मिलैंगा प्रमाण रा० अयो० दो० १३ के बाद ॥ जाति पाति धन धर्म बड़ाई ॥ प्रिय परिवार सदन समुदाई ॥ सब तजि तुमहिं रहै लव लाई ॥ ताके हृदय बसहु रघुराई ॥ काहुन कोउ सुख दुख कर दाता ॥ निज कृत कर्म भोग सब भ्राता ॥ माया वश्य स्वरूप बिसराया ॥ तेहि भ्रम ते नाना दुख पाया ॥ जाति का अर्थ समाप्त । अब जमात का अर्थ— प्रमाण बीजक सा० १७२ ॥ हीरों की ओबरी नहीं, मलयागिर नहिं पाँति ॥ सिंहों के लेहँड़ा नहीं, साधु न चले जमात ॥ अकेला बघेला दुकेला बलङ्ग, तीसरे में खटपट चौथे में जङ्ग ॥ अब मेला भण्डारा का अर्थ (भण्डारा हनिडारा, गर्भवास में लेडारा) सातवाँ कुटी मढ़ी बनाना, सियार बिल खोदते हैं सिंह नहीं ॥ दोहा-- शिष्य शाखा संसार गति, सेवक प्रत्यक्ष काल । बैरागी छावे मढ़ी, ताको मूल न डाल ॥ कबीर साखी ॥ जो शिष्य नौकाल की कल्पना में आसक्त है वही प्रत्यक्ष काल है । आठवाँ कल्पना, दोहा—काल काल सबही कहै, काल न चीन्है कोय ॥ जहाँ तक मन के कल्पना, काल कहावै सोय ॥ नौवाँ वाणी जाल, ईश्वर ब्रह्म आत्मा ओत प्रोत व्यापक मानना देवी देवतादि यही नौकाल का अर्थ समाप्त । अन्नमयादि पाँच कोश शब्द मयादि चार कोश यही नौकोश है । शब्द स्पर्श रूप रस गन्ध, मन चित्त बुद्धि अहंकार यही नौमन सूत अरुझि नहिं सुरझे जन्म जन्म उरझेरा ॥ और यही नौकाल की नौका में अनेक जीव नदिया रूप डूबे जा रहे हैं ।

१—दया, धैर्य, सत्य, शील, बिचार, विवेक, बैराग्य, गुरु भक्ती, सुमति यही नौ गुण हैं और यही नौ मन दूध में अहंकार रूपी तेज खटाई पड़ने से ज्ञान रूपी घृत का नाश हुआ सो जानिये ।

सात[1] काल माथे धरे, महन्त कहावे सोय ।
ओछेसे नेह लगायके, जीव जमा गये खोय ॥ ९ ॥
गुरु गुरुआ में भेद है, याको लीजै जान ।
एक छोड़ावे बन्ध से, एक बन्ध में सान ॥ १० ॥
निज स्वरूप जाने नहीं, नौ में फँसे महन्त ।
बन्धा गुरु तेहिं जानिये, इन्हें कहै नहिं सन्त ॥ ११ ॥
निज स्वरूप पर शान्ति ह्वै, नौ को छोड़ै जोय ।
नौगुण को धारण करे, सद्गुरु कहिये सोय ॥ १२ ॥
नौ में फँसे महन्त जो, अन्धा गुरु तेहि जान ।
अन्धी अन्धा संग करि, इनसे नहिं कल्याण ॥ १३ ॥
नौ में फँसे महन्त जो, गुरु सीढ़ी नहिं पाय ।
ताको काल घसीटहीं, यम के हाथ बिकाय ॥ १४ ॥
पाँच चार की पक्ष करि, भूले गुरु तेहिं जान ।
नौ गुण को धारण करें, पावे पद निरवान[2] ॥ १५ ॥
कच्ची सरसौं जानिये, नौ में फँसे महन्त ।

१— दाम, जमीन, जाति, जमात, मेला, ठेला, भण्डारा कुटी पर करना, चार मन चावल दाल खर्च करके दस बीस मन आटा दालादि रख लेना यही स्वार्थ धर्मार्थ उभय जाल में फँसना है। चौ०—माँग जाँच के करे रसोई। कहहिं कबीर नफा न होई॥ छठवाँ कुटी मढ़ी बनाना, सातवाँ कल्पना यही सात काल माथे धरे हुये का नाम गुरवा है और बिचार रहित नौ काल में फँसे हुये का नाम गोरू पशु हैं यही बन्धन देने वाले काल भी हैं। और नौकाल के बन्धन से छूटा हुआ दूसरे को छोड़ावे वही बन्दीछोर परोपकारी भी है।

२—अपना चैतन्य स्वरूप ही निरवाण पद है।

खली तेल गायब हुआ, कैसे कहिये सन्त ॥ १६ ॥
पक्का सरसौ जानिये, नौ से न्यारा होय।
खली तेल न्यारा भया, गुरु करो सब कोय ॥ १७ ॥
नौकाल से रहित होय, निज स्वरूप पर शांति।
जागता गुरु जानो सोइ, मोह निशा नहिं भ्रांति ॥ १८ ॥
नौकाल की नावका, नदिया जीव अनेक।
नइया बीच नदिया डूबे, कोई बचे विवेकी एक ॥ १९ ॥
नौकाल के फाँस ते, बाँचे सन्त महन्त।
सुमिरन ध्यान तेहिकर करो, साहेब कबीर कहन्त ॥ २० ॥
अठारह[१] त्रिगुण के परे, अपना शान्ति स्वरूप।
यह बिचार हरदम रहे, पड़े नहीं भव कूप ॥ २१ ॥
नौ में नेह लगाय के, बहुतक पाप कमाय।
गर्भ भास उलटे टँगे, कहहिं कबीर समुझाय ॥ २२ ॥
लोह रुप अर्जुन रहे, पारस कृष्ण कहाय।
गले हिंवारे पाण्डवा, यहि धोखे नहिं जाय ॥ २३ ॥
कारी हण्डी नारि है, लेकर चले जो कोय।
देत न शोभा साधु को, ताते बर्जित दोय[२] ॥ २४ ॥
कनक कामिनी दोय को, कबीर बताये आग।
इन दोनों में न जले, ताको पूरण भाग ॥ २५ ॥
नौकाल के फाँस ते, नारी[३] बाणी छूट।

१—छा देह का त्रिगुण अठारह हुये सो अर्थ सहित गुरु चेला सम्बाद ४०५ पृष्ठ में देखिये। २—कनक कामिनी। ३—स्त्री भोग और ईश्वर मानन्दी यही दो छूटा है सो जानिये।

सात काल माथे धरे, इनको कहिये धूर्त ॥२६॥
बाणी जाल से रहित हैं, स्त्री भोगे नाहि।
दोइ कोश को छोड़िके, सात में अरुझे जाय ॥२७॥
सात कोश जब रहि गया, रागद्वेष नहिं छूट।
जीवन्मुक्ति कैसे कहैं, भई जमात में फूट ॥२८॥
स्वार्थ[1] धर्मार्थ गृही करैं, याही करते साधु।
पाप पुन्य दोनों फँसे, कैसे मता अगाधु ॥२९॥
परमार्थ[2] को छोड़ि के, उभय[3] जाल गहि लीन।

१—गृही नर अपना चार मन अन्न पैदा किये उसमें से सेर भर अन्न अपना खाये वह स्वार्थ में आ गया और उसी में से सेर भर अन्न कोई साधु खा गया वह धर्मार्थ में खर्च हुआ गृही नर अपना घर बनाया और उसमें रहा वह स्वार्थ में आ गया, और कोई साधु उस घर में एक रात रहा वह धर्मार्थ में खर्च हुआ गृही नर अपना कुआँ खोदवाया, और अपना ही पानी पिया वह स्वार्थ में आ गया, और कोई दूसरा मनुष्य पानी पिया वह धर्मार्थ में खर्च हुआ जानिये। तो सज्जनों! विचार करो कि स्वार्थ धर्मार्थ गृही नर करै और यही स्वार्थ धरमार्थ साधु भी करैं तो जैसे यह वैसे वह हुये इसमें क्या फर्क, अन्धरा बाँटै सिन्नी घरै घराना खायँ, जहाँ पाँच सेर चावल और रुपया मिलै वहाँ दल, निमन्त्रण यह स्वारथ देखिये और सन्तों से बैर यह पक्षापक्षी के कारणे सब जग रहा भुलान को गुरु मत बनावो ये सातकाल माथे धरे हुये का नाम गुरवा है। २—साधु गुरु का काम परमार्थ, परख परखावन जीवन केरा॥ यह ब्यवहार यथार्थ निबेरा ॥ पंचग्रंथी व रामायण अयोध्या का०॥ देखिये सुनिये गुनिये मनमाहीं। मोह मूल परमारथ नाहीं ॥ परमार्थ में सिर्फ अपना स्वरूप रह जाता है और नौ काल के झगड़े सब खत्म हो जाते हैं। ३—धर्म अधर्म, हद्द बेहद्द, जाति अजाति, छूत अछूतादि अनेक जोड़ा का नाम उभय जाल है।

गुरु सीढ़ी को छोड़िके, बहुत ठगौरी कीन ॥३०॥
गुरु सीढ़ी सोई जानिये, नौ से न्यारा होय।
नौगुण को धारण करैं, सद्गुरु कहिये सोय ॥३१॥
कुलजम चौका भागवत, अघबिनाश बहु बाँच।
गृही गुरु भेष धरि, दाम ठगै नौ नाँच ॥३२॥
जीवन्मुक्ति कहाय के, जाति पक्ष नहिं छूट।
पाँच काल माथे धरे, गुरु पारख नहिं जूट ॥३३॥
सुमति सत्यता राखि के, बीर बने हरिश्चन्द्र।
छा गुण[1] को धारण किये रामजी दशरथनन्द ॥३४॥
बिप्र सुदामा सुपज जी, शीली सेवरी जान।
सत्य सुमति धारण किये[2], गाँधी भये महान् ॥३५॥
सुमति सचाई क्षमा में, ताकत भये अथाह।
सो कबीर धारण किये, जीवन के मल्लाह ॥३६॥

१—परायी स्त्री माता समान, पराया धन विष के समान तीसरे परजा का सेवा, चौथे सन्त का सेवा, पाँचवें गऊ का रक्षा, छठवें मन रूपी राक्षस का नाश ए छः काम राम में था ये छागुग लाखों राजा न धारण करने से लाखों राजा का राज चला गया।

२—रेल गाड़ी में गांधी जी बैठे थे एक सेठ ने एक पटरी पर थूक दिया गांधी जी सेठ से कहे कि पटरी पर क्यों थूका, सेठ ने एक तमाचा गांधी जी को मार दिया, गांधी जी जल से पटरी को धो दिया और कहे कि आप ने एक तमाचा मार दिया अच्छा किया, आप का काम था थूकने का हमारा काम था धोने का हमने धोया नहीं इसलिए आपने मार दिया अच्छा किया। झाँई, सन्धि काल के अर्थ गुरु चेला सम्बाद १६ पृष्ठ में देखिये।

बन्दीछोर कबीर गुरु, खानि बाणि परखाय।
झाँई सन्धि औ काल में, और सबै अरुझाय ॥३७॥
नाथ मछन्दर बाचे नाहीं, गोरखदत्त औ व्यास।
कहहिं कबीर पुकारिके, ई सब परे काल की फाँस ॥३८॥
नौकाल से रहित जे, उनसे ठानै बैर।
महन्त फँसे हैं सात में, ग्रन्थ रचे हैं ढेर ॥३९॥
सुमति क्षुधा बाढ़े न्हीं, बिषय आश नहिं छूट।
मुक्ति मार्ग कैसे मिले, भई साँच[1] से फूट ॥४०॥
सांचा से भागा फिरै, झूठे से करै नेह।
झूँठ असार नौ काल है, मूल गहो धरि देह ॥४१॥
थानेदार महाउत पण्डा, कानूनगो लिख पाल।
महन्त भिखारी ब्यसनी रण्डी, नौ बन्धन के जाल ॥४२॥

॥ सवैया ॥

बोध बयालिस आज पढ़ै औ कढ़ै सत्संगति में लखि सारा।
बीजक वित्त[2] बताय दियो गुरु बन्दी छोर कबीर उदारा ॥
नौकाल यही नौकोश यही नौ नाँव के बीच डुबै जिव सारा।
जीव अनेक उबारन के हित बन्दी छोर बन्यो कड़िहारा ॥ १ ॥
सन्त अनेकन के शिर ऊपर एकहि आप देखाय पर्‌यो है।
नौकोशके पार स्वरूप लख्यो तब जीव के बन्दि छोड़ाय रह्यो है ॥

१—साँच मूल, अपना चैतन्य स्वरूप ही है इसी को गहो यानि इसी पर स्थिर होवो।

२—चैतन्य रूप धन को पास ही हृदय में बीजक बताय दिया।

नौ हथियार उठाय लियो तब काल के जाल ढहाय दियो है।
शेष वही निजरूप रहा अब आवनको दुख नाहिं रह्यो है ॥२॥

२—(भजन)

घरही में रहो बालम कै लो मजा ॥ टेक ॥

घर को छोड़ि नौ मैं जो फँसिहौ, गर्भ बास दुःख पइहौ सजा ॥ घर ॥ १ ॥ धरती धन मठ मन्दिर में फँसकै, कितनों महन्तन कै होय गे कजा ॥ घर ॥ २ ॥ पाप पुण्य दुई जाल को छोड़ो, निज स्वरूप सुख मँहकै ध्वजा ॥ घर ॥ ३ ॥ प्रीति क्रोध दुइ पाट के भीतर, पीस गये बहु राम रजा ॥ घर ॥ ४ ॥ सन्त असन्त दुई हैं जग में, सन्त कबीर गुरु नौ को तजा ॥ घर ॥ ५ ॥ धर्म अधर्म झूठ नहिं छोड़ेव, काल कल्पना कैसे भजा ॥ घर ॥ ६ ॥ पक्ष अपक्ष बूझ के त्यागो, गुरु निष्पक्षी कै डङ्का बजा ॥ घर ॥ ७ ॥ राम लाल निज रूप असल गहि, सब सुख है अब याही मजा ॥ घर ॥ ८ ॥

टीका—घर कहिये निज स्वरूप असल अविनाशी एक देशी को, नकल घर कहिये पांच तत्त्वों से बनी हुई काया माया मठ मकान, बालम कहिये मन को, मजा कहिये सर्व आशा रहित सर्व सुख निज रूप को। मन राजा के दो स्त्री प्रवृती निवृती। निवृती स्त्री के परिवार विवेक वैराग्यादि। प्रवृती स्त्री के परिवार लोभ मोह आदि। निवृती स्त्री अपने मन राजा से कहती है कि हे राजन्! सकल आशा नौकाल को छोड़कर निज स्वरूप घर पर शान्ति सुख यानी सर्व सुख मजा करलो।

निज स्वरूप घर को छोड़ि के नौकाल के पर पंच में ॥ टेक ॥ फँसौगे तो गर्भ वास में उल्टे टंगोगे यह घोर नर्क दुःख है ॥ १ ॥ कजा कहिये मौत को। धरती धन मठ मकान में जो महन्त फँसते हैं उन्हें डाकू चोर आग से भूजते हैं दाढ़ी मोछ उखाड़ते हैं भाला पेट में गड़ा के प्राण निकालते हैं यही मौत है ॥२॥ अब तीसरे पद का अर्थ सुनो—कुँआ कुटी बनवाने में खेती करने में मेला भण्डारा आदि करने में पाप पुण्य रूपी जाल परबै करी, इसलिये पाप पुण्य दोनों जाल को छोड़ने से निज स्वरूप सुख सदा के लिये यश रूपी खुशबुई का पताका मँहकता ही रहैगा ॥३॥ चौथे पद का अर्थ सुनो—राम ने सीता से राग कहिये प्रीति की, तब रावण ने सीता को चुरा ले गया चोरी हो गई एक बात। तब रामने रावण को मार डाला अब हिंसा हो गया दो बात। रावण ने सीता को अपने कन्धे पर बिठा लिया तब व्यभिचार हो गया तीन बात। स्त्री को देखने से काम की उत्पति, दाम को देखने से लोभ की उत्पति, और इन दोनों के संयोग से क्रोध की उत्पति होने से राम ने रावण को मार डाला। इसलिये स्त्री दाम जमीन ही से इन छओं की उत्पति होती है आसमान से यह षट विकार गिरते नहीं सो जानिये। रामचन्द्र आदि अनेक राजा पापपुण्य रूपी दुइ पाट के भीतर पीसे गये ॥४॥ पांचवें पद का अर्थ सुनो—एक जाहिल मूर्ख मनुष्य कुछ नहीं पढ़े है वह भी धरती धन धाम (मकान) में फँसा है और एक सन्त का भेष धारण करके वेद शास्त्र रामायण बीजक आदि पढ़

कर इन तीनों में फँसा है तो उस अनपढ़ा मूर्ख में औ इन पढ़े हुये में क्या फर्क इसलिये इनका नाम असन्त है सो जानिये ॥ ५ ॥ नौकाल का अर्थ और पक्ष निपक्ष का अर्थ निर्पक्ष रत्नाकर ग्रन्थ टाइटिल ही में देखिये (प्रथम पन्ने में)

(३) प्रश्न—भारत रूपी बगिया को उजाड़ने में बेगाना कौन २ हुये ?

उत्तर— [राष्ट्रीय कँहरा अद्धा]

बेगाना हमसे ह्वै गैले घर ही के भाय ॥ टेक ॥

सोने कै लङ्का माटी में मिलाय देहले, भेदवा विभीषण देहले बताय ॥ बेगाना ॥१॥ क्षत्री कै शान जयचन्द माटी में मिलाय देहले, गजनवी के गोरी को देहलिस मिलाय ॥ बेगाना ॥ २ ॥ राणा प्रताप सिंह फिरले बनवा बनवा, मानसिंह बन गये दुलहिन के भाय ॥ बेगाना ॥३॥ झाँसी कै रानी अपने गोदी में बालक लीन्हें, छक्का बिदेसियन कै देहलिस छोड़ाय ॥ बेगाना ॥ ४ ॥ श्री दयानन्द स्वामी घरही के चेला, दुधवा में जहरवा देहलै मिलाय ॥ बेगाना ॥ ५ ॥ सात जने मिल के भारत बगिया उजार देहले, सातौ कै नौवाँ बैदा देहलै बताय ॥ बेगाना ॥६॥ रायसाहेब, रण्डी, भिखमंगा, नशाखोर भइया, पण्डा, पटवारी, मिल दरोगा गइले खाय ॥ बेगाना ॥७॥

(४) प्रश्न—गुरू जान बूझ कर किस प्रकार से करना चाहिये उनके रहस्य रहनी गहनी का पहचान प्रमाण सहित कहिये ?

उत्तर—प्रमाण पुराना कबीर साखी बम्बई वाले छापेखाने का—

दोहा—सौ पापन का मूल है, एक रुपैया ड़ोक।
साधु जन संग्रह करैं, हारै हरि[1] से थोक[2] ॥१॥
हरि जन गाँठि न बाँधई, बोद्र[3] समाता लेंय।
आगे पीछे हरि[4] फिरैं, जब माँगै तब देंय ॥२॥
जाति[5] बरन कुल खोय के, भक्ति करै चित लाय।
कहहिं कबीर सद्‌गुरु मिले, आवा गवन नशाय ॥३॥

१—हरि कहिये नौकाल से रहित सद्‌गुरु को।

२—नौकाल के फाँस में नर तन जीव जमा थोक को हार गया यानी गर्भवास में परा।

३—दोहा—बोद्र समाता अन्न ले, बदन समाता चीर।
याहू सो अधिका नहीं, उसका नाम फकीर॥

४—दोहा—कबीर कमाई आपनी, निष्फल कभी न जाय।
सात समुद्र आड़ा परै, मिलै अगाऊँ धाय॥

अपना अपना प्रारब्ध वर्तमान होने का नाम हरि का आगे पीछे फिरना है।

५—मनुष्य जाति एक, दूसरा पशु, तीसरा अण्डज, चौथा उष्मज यह चार जाति में मनुष्य जाति कर्म भूमिका में भी हिन्दू मुसलमान अंग्रेज तीन के अलावा चार वरण, में अनेक जाति होने पर कबीर साहेब कहते हैं (शब्द ७५) बीजक में—एकै त्वचा हाड़ मल मूत्रा, एक रूधिर एक गूदा॥ एक बुन्द से सृष्टि रची है, को ब्राह्मण ? को शूद्र ? हिन्दू तुरुक झूठ कुल दोई॥ रमैनी २६॥ रोजगारी लोग उसी हाथ से नाक छिरके पिशाब किये बीड़ी पिये तम्बाकू हाथ पर मल कर खाये हाथ धोये नहीं उन्हीं के हाथ का पिसान शक्कर बताशा

निर पक्षी को भक्ति है, निरमोही को ज्ञान।
निर द्वन्दी को मुक्ति है, निरलोभी निर बान ॥४॥
गाँठी दाम न बाँधई, नहिं नारी से नेह।
कहहिं कबीर ता साधु की, हम चरणन की खेह ॥५॥

लाई गट्टा भूजा गुड़ तेबादि अनेक वस्तु भण्डारा में लाये गृहस्थ बिरक्त सब भोजन करते हैं यहाँ जाति का पाखण्ड नहीं है? अब जिस कुँआ पोखरा में तुरुकों का बधनी मट्टी का घड़ा अपवित्र छुतेहरा आदि उसी कुँआ में पड़ता है मेंघा मछली आदि सर्व कर्म करते हैं उसका पानी पी लेते हैं॥ प्रमाण बीजक शब्द ४२॥ नदिया नीर नर्क बहि आवै, पशु मानुष सब सरिया॥ छप्पन कोटि यादव जहाँ भीजे मुनि जन सहस अठासी॥ पैग पैग पैगम्बर गाड़े सा सब सरि भौ माटी॥ इस हिसाब से मिट्टी जल अशुद्ध ही है तो किससे सब वस्तुएँ धो कर शुद्ध करोगे? यहाँ भी पाखण्ड किसी का नहीं चलता, अब पाखण्ड देखिये हिन्दू भेषधारी साधुवों का एक गुरु द्वारा एक अखाड़ा एक रहनी गहनी सफाई में, कोई कुरमी बनता, कोई. कलवार बनता, उनका बनाया भोजन नहीं खायेंगे, उनका बालटी थारी नहीं छूने देंगे उनका कुँआ में कमण्डल नहीं भरने देंगे, ये सात काल माथे धरे धूर्त पाखण्डी संचित कर्म वचन से ही भूजे डालते हैं। जैसे एक मनुष्य गरीब होने से पाँच सौ रुपया कर्ज खा लिया समय पाकर लखपती हो गया तो लखपती हो जाने से क्या पांच सौ रुपया कर्ज नहीं देना पड़ेगा? अवश्य देना पड़ैगा! इसलिये बीजक प्रमाण हिण्डोल॥ काल, अकाल प्रलय नहीं तहाँ सन्त बिरले जाहि। कहहिं कबीर सत सुकृत मिले तो! बहुरि न भूले आन! नौकाल से रहित नौगुण सहित निज स्वरूप पर स्थिर होने से सत सुकृत का मिलना जानिये फिर अब गर्भवास में नहीं झूलेगा ऐसा जानिये!

सन्त मता गजराज का, चालै बन्धन छोर।
जग कुत्ता पीछे फिरै, सुनै न वाकी शोर॥ ६॥
शिष्य शाखा संसार गति, सेवक प्रत्यक्ष काल।
वैरागी छावे मढ़ी, ताको मूल न डाल॥ ७॥
जब लग नाता जाति का, तब लग भक्ति न होय।
नाता तोड़े गुरु भजै, भक्ति कहावै सोय॥ ८॥
विषय त्याग वैराग्य है, समता कहिये ज्ञान।
सुख दाई सब जीव सो, यही भक्ति प्रमान॥ ९॥
बिना पाँव[1] का पंथ है, बिन बस्ती का देश।
बिना देह का पुरुष है, कहहिं कबीर संदेश॥१०॥
साधु, सती, औ शूरमा, ज्ञानी गज औ दन्त।
ते निकसे नहिं बाहुरे, जो युग जाहिं अनन्त॥११॥
साधु ऐसा चाहिये, आई देय चलाय।
दोष न लागे तासु को, सिर की टरै बलाय॥१२॥
साधु ऐसा चाहिये, ज्यों मोती में आब।
उतरे तो फिर न चढ़े, अनादर होय रहाब॥१३॥

(५) प्रश्न—नाम रूप व अनेक जोड़ा में जीव बन्धे हुये का कीर्तन कहिये ?

१—चैतन्य स्वरूप पर पहुँचने नाम स्थित हने के लिए पाँव की जरूरत नहीं है चैतन्य स्वरूप में बस्ती देश देह भी नहीं है जहाँ नौकाल का चाहना खतम हुआ वहाँ अपने आप अखण्ड स्वरूप अचल रह गया।

उत्तर—(जड़ चेतन निर्णय)

निज नामी[१] को तैने न जाना रे। रहा नाम[२] में हरदम भुलाना रे ॥ टेक ॥ दोहा—देह जीव संयोग से, नाम अनेकन[३] बोल। देह जीव न्यारा भया, रूप रहित भया पोल ॥ संशय[३] पोलवै में लोगवै लोभाना रे ॥ निज ॥ १ ॥ जड़ चेतन सम्बन्ध में, चाह अनेकन ठान। चाह गये फिर नहिं जनम, बहु जोड़ा[४] की हानि ॥ बहु जोड़ा से न्यारे निज रहना रे ॥ निज ॥ २ ॥ जड़ चेतन सम्बन्ध में, अल्लाह ईश्वर रटता है। बिषय बुराई छुटता नाहीं, धोखे में दिन कटता है। सदाचारी[५] से दुख सब जाना रे ॥ निज ॥ ३ ॥ अल्लाह ईश्वर ब्रह्म जो, भूत प्रेत शैतान। गोबर माटी शिला समाधी, मुर्दा को नहिं मान। कंचन कांता[६] से निज को बचाना रे ॥ निज ४॥ सत्संगति में बैठ कर, साँच झूठ निरुवार। निज पद में रहु शान्ति ह्वै, तब भवसागर पार। त्रय[७] ग्रन्थी का एही छोड़ाना

टिप्पणी—१–अपना चैतन्य स्वरूप अविनाशी को नामी कहते हैं। २–दृष्टा चैतन्य अपने को भूलकर नाम रूप मिथ्या, नौकाल माया में भूला। ३–राम, कबीर, ईश्वर, अल्लाह, शैतान, प्रेतादि झीनी माया मुर्दा का पूजना पुकारना यही पालही अनेक नाम हैं और संशय रूपी सावज भी है यही अनुमान कल्पना से माना हुआ ईश्वर प्रेत ने अनवेधा हीरा जीव को खाया यानी गर्भवास में छोड़ा। ४–पाप पुण्य, शुभाशुभ, दुख सुख, कारण कारज, नाम रूप, ओहं सोहं आदि ऐसे २ बहुत जोड़ा में जीव बन्धे। ५–निष्कामी, खानी बाणी से रहित पुरुष को सदाचारी कहते हैं। ६–स्त्री ७–त्रय ग्रन्थि का नाम व अर्थ व्याख्या सत्यासत्य निर्णय ग्रंथ १९८ पृष्ठ में देखिये।

रे॥ निज॥ ५॥ गुरु पद निज पद साँच है, झूठ विषय सब जानि। संयोगे में विषय है, वियोगे गुण हानि। जीते जीवहिं में कर ले ठिकाना रे॥ निज॥ ६॥ चूना हल्दी मेल से, लाल रङ्ग हो जाय। तैसे नारी पुरुष से, पुत्री पुत्र बनाय॥ याते सोहम से उत्पत्ति नाहीं माना रे॥ निज॥७॥ संयोगे का गुण रवै, वियोगे गुण जाय। जिभ्या स्वारथ कारणे, नर कीन्ह्यो बहुत उपाय। चाह अगिनी से निज को हटाना रे॥ निज॥ ८॥ जीभ लिङ्ग के स्वाद से, दुनियाँ रहै हमेश। इन दोनों को बश करे, जीव शीव रहे शेष॥ चौसाधन से चोर वै भगाना रे॥ निज॥९॥ शेष वही निज रूप को, लाल गुरू दरशाय। राम लाल बन्धन छुटे, ताते बन्दत पायँ। सदा करते विचार दुख जाना रे॥ निज॥ १०॥

(६) प्रश्न—तृण समान पाँच कौन २ हैं!

उत्तर—रामायण सुन्दर काण्ड दोहा ८ के बाद चौपाई—

तृण धरि ओट कहति बैदेही। सुमिरि अवध पति परम सनेही॥

दोहा—मुख ढाकन शारङ्ग दहन, नेत्र अञ्जन जोय।
शाप ददन आशिष ददन, तृणसम कहिये सोय॥

प्रश्न—सीताजी लङ्का में रावण से तिनुका का ओट धरि के कहती हैं तिनुका के ओट से कोई अङ्ग कैसे ढाँप सकती हैं?

उत्तर—

स्त्री अपने अँचरा वस्त्र से मुख भी ढाँप लेती हैं और शारङ्ग चिराग भी अँचरा से बुझा देती हैं। आँख का अञ्जन

भी पोंछ लेती हैं और शाप आशीश भी उसी अचरा से देती हैं इसलिये यह पाँचो तृण के समान मानी गई हैं ।ह

(७) प्रश्न—पाँच पुनीत वस्तुएँ कौन २ सी मानी गई हैं ।
उत्तर—दोहा—काक प्रियाक मृतक वसन, शिव निरमाइस तोय ।
यक जूठन यक बमन रस, पञ्च पुनीतहिं सोय ॥

अर्थ—पीपल वृक्ष के बीज को जब कौआ खाकर विष्ठा करता है तभी वह बीज जामता है अन्यथा नहीं । रेशमी कपड़ा भी कीड़े के मरने पर सूत मिलता है और मृग छाला व कस्तूरी भी मृग के मरने पर मिलता है शिव के जटा से गङ्गा जी निकली, [परायत वचन है] बछड़ा का जूठन दूध, मधु मक्खी का उल्टी वमन रस शहद, और गऊ का गोबर दीमक कीड़ा की खाई हुई मिट्टी का विष्ठा विमवट का मिट्टी लाके पारथी व देवता बनाके मन्त्र से प्राण प्रतिष्ठा करके पूजते पुजाते हैं यह सब वस्तुयें अपुनीत अपवित्र होते हुए भी पुनीत मानी गई हैं ।

(८) प्रश्न—चारो युग का जन्म कब २ हुआ ?

उत्तर—

सतयुगका जन्म कातिक सुदी नवमी को हुआ ॥१॥ द्वापर का जन्म माघ वदी अमावस्या को हुआ ॥ २ ॥ त्रेता का जन्म वैसाख सुदी ३ अखर तिथि को हुआ ॥ ३ ॥ कलियुग का जन्म भादँव वदी अमावस्या को हुआ ॥ ४ ॥ इसी तिथि को भ्रमिक लोग मेला भण्डारा तीर्थ यात्रा करते कराते हैं सो जानिये ।

(६) प्रश्न—रामायण में दो मुख का बोलना कौन २ चौपाई है ?

उत्तर—रा० बा० दोहा २६० के बाद लङ्का काण्ड दोहा ११३ के बाद।

॥ चौपाई ॥

तृषित बारि बिन जो तन त्यागा। मुए करइ का सुधा तड़ागा॥
सुधा वृष्टि भई दुहुँ दल ऊपर। जिए भालु कपि नहिं रजनीचर॥

अर्थ—धनुष भंग के समय रंग भूमि में सीता जी कह रही हैं कि बिना पानी के जिस मनुष्य का तन त्याग हो जाता है उसको यदि तालाब भर अमृत पिलावो तो जीने को नहीं। फिर लङ्का में अमृत के बरषा दोनों दल में हुआ तिसमें बन्दर भालु जिए निश्चर नहीं जिये। सज्जनों विचार करो कि रामचन्द्र का बचन सत्य है तो उधर सीता जी का बचन खण्डन होता है फिर लक्ष्मण के शक्ति बाण लगने पर वह अमृत का वर्षा नहीं कर पाये, गोदी में लिए राम रोते हैं कि अवध में हम क्या उत्तर दूँगा जो कहो भगवान लीला किया तो फिर उगिला क्यों यानी बदला क्यों दिये राम औतार में बालि रावणादि का नाश किया कृष्ण औतार में छप्पन कोटि यदु-वंशी कृष्ण सहित नाश हुये बदला का बयान विश्राम सागर में बहुत है। इसलिये अमृत रूपी जीव ही सत्य है और सब झूठ ही गप्प हाँकना है। योग वाशिष्ठ २१ सर्ग पृष्ठ ११६ में लिखा है कि ईश्वर का अभाव हो जाता है यह रामवचन है। रामायण लवकुश काण्ड दोहा ५० के बाद।

॥ चौपाई ॥

अनुज समर महँ तुम हिय हारे । साजहु हय गजरथ मतवारे ॥
रहौ यज्ञ रिपु देखहु जाई । बालक रावण के दुखदाई ॥
तीव्र वचन सुनि भरत लजाने । बहुत भाँति रघुपति सनमाने ॥
धन्य मातु पितु जेहि तुम जाये । पुरुष युगल घर जाहु सोहाये ॥

अर्थ—रामचन्द्र जब लङ्का में सीता जी से परीक्षा लिया तब तो सीता जी अदाग थीं गर्भवती सीताजी को लक्ष्मण जी रथ पर बिठा कर जंगल में छोड़ आये। बालमीकी रामायण व सुखसागर ग्रन्थ में लिखा है कि दो लड़के जोड़ा ही पैदा हुये बालमीक जी कुश से छिरक कर पवित्र किया बड़े लड़के का नाम कुश छोटे का नाम लव रक्खा, अब यहाँ तक सीता जी में कोई ऐब न था। अब राम जी अन्तरयामी होकर फिर ऐसा कह रहे हैं कि ॥ बालक रावण के दुखदाई ॥ ऐसा तीव्र वचन सुनकर भरत जो लज्जा खा गये। सज्जनों! विचार करो कि उधर रामचन्द्र को अन्तरयामी भी कहते हो इधर कहते हो कि मारीच सोने का मृग बनकर आया राम नहीं जान पाये कि अभी रावण छल से सीता जी को हरण करैगा अगर ऐसा जान जाते तब घर छोड़कर घूर बुझाने क्यों जाते विनाश काले विपरीत बुद्धी क्यों होती इस हिसाब से कई जगह साबित होता है कि लक्ष्मण के भाई भौजाई माता पिता ये पाँचो को रावण ने मूर्ख कहा है इसका प्रमाण गुरु चेला सम्बाद ३४२ से ३५५ पृष्ठ तक देखिये बहुत चौपाई दो मुख का बोलना

है इसी से रा० बा० दो० ४३ में लिखा है कि। कल्प भेद हरि चरित सुहाये। भाँति अनेक मुनीशन गाये॥ जब अनेक भाँति के गा गये तब उसका कौन तथा मर्याद इसलिये नौकाल से रहित नौगुण सहित होकर सार चैतन्य अविनाशी पर स्थिर होइये तभी मुक्त हो सकते हो अन्यथा नहीं।

(१०) प्रश्न—दो प्रकार के कारथ, दो प्रकार के स्वारथ और पाँचवाँ परमार्थ किसे कहते हैं जिससे जनम मरण दुख छूटता है सो कहिये ?

उत्तर—

कोई मनुष्य किसी का घर फूँक दिया लंका दहन हुआ तो उसमें तमाम छोटे बड़े नर पशु पंछी आदि जीव मरे ये महान हत्या हुआ और भूसा, अन्न, धन, वस्त्रादि जल गया तब धन जायदाद सब कारथ में चला गया न राम ही को मिला न रावण ही को मिला। ये प्रथम कारथ पाप से दैहिक ताप यानी कोढ़ी, आन्धर, लकवा, फालिज, भकन्दर बवासीर, फोड़ा, फुन्सी आदि नाना प्रकार के रोग बदन में चालू रहेगा। पूर्व और वर्तमान कर्म मिल के कमी बेशी होने से दुख सुख भोगना पड़ता है। अब दूसरे प्रकार का कार्थ सुनो ! राजा नृग, कृष्णदत्त राजा, रामजी, कृष्ण भगवान, कुपात्र निगुणा को दान देने से कारथ में धन चला गया यानी ऊसर खेत में बोया गया। राजा नृग मरे तब गिरगिट हुये इसमें चार पाप था। एक तो साधु का गौ जबरन छीना,

दूसरे कुपात्र को दान दिया, तीसरा निगुणा राजा थे, चौथा वही गऊ दोबारा दान दिया। कृष्णदत्त मरे तब हाथी का जन्म पाये। इनमें भी चार पाप था। एक तो रानी सुन्दरी ने दीक्षा मन्त्र ले लिया तब कृष्णदत्त अपनी रानी को मारने दौड़े, दूसरा पाप अपने यज्ञ में साधु को भूखा वापस किया, तीसरा पाप कुपात्र निगुणा ब्राह्मणों को दान दिया, चौथा पाप नारद के आने पर मन्त्र लेने से इनकार किया, कातिक महीने में मन्त्र लेने का वादा किया। तब कातिक की आश लगायो। अब हाथी की देही पायो॥ तब तो खायो बड़ बड़ माँसू। अब कस रोवो स्रून आँसू॥ तब तो रह्यो कातिक के आशा। क्यस नहिं खात्यो ढाँक पराासा॥ यह चार पापों का फल है। एक खुराक अन्न साधु को खिलाया तो वह अनर्थों से बचे हुए ब्रह्म मुहूर्त में जाग कर निज स्वरूप के विचार में मन अडोल रखते हैं यही सच्चा भजन है। और वही एक खुराक अन्न विषयी, पामर निगुणा गृही महन्थों को खिलाया तो वह ब्रह्म मुहूर्त में महंथिनी से भोग करते, अदालत लड़ते, झूठ बोलते, तमाखू नशादि खाते, वेश्या नचाते, लड़की के विवाह में बरात आती है उसमें बकरादि काटते हैं। कहो सज्जनों विचार करो! इनको यह अन्न धन देने से कौन अच्छे जगह खर्च किये? इसी पाप से कृष्णदत्त राजा, राम, कृष्ण, विष्णु, नृग हाथी, गिरगिट, मछरी, कछुवा, सूअर का जनम पाये एको गऊ भवसागर पार न किया और जिस २ को मारे

या वृन्दा संग भोग किये सो सब सबको बदला देना पड़ा। बिश्राम सागर व गुरु चेला सम्बाद में देखिये प्रमाण सहित है। दो प्रकार का कारथ समाप्त। अब दो प्रकार का स्वारथ सुनो ! १–अपने स्वार्थ के लिये मनुष्य या राजा दूसरे राज्य पर चढ़ाई करके जबरन धन छीन लाया या डाँका पड़के लूटा या नकब (सेन्ध) लगाकर धन, भेष बदल कर स्त्री चुरा लाये या भोगे तो अपने कुटुम्ब सहित खायँगे भोगैंगे। इस चोरी, हिंसा, व्यभि-चार से भौतिक ताप भोगैंगे। यानी जानदार जानवरों से मार पीट, काट छेद, नोच फाड़, झरस कर दुख मिलैगा। यह दुष्ट स्वभाव का स्वार्थ है। २–अब दूसरे प्रकार का स्वार्थ सुनो ! रानी सुन्दरी व द्रोपदी का दान सुपात्र यानी खद गौर खेत में बोया गया रानी सुन्दरी ने साधु नारद जी से मन्त्र लिया साधु गुरु की सेवा ध्यान किया इसलिये इनका जन्म राजा के यहाँ हुआ और रानी सुन्दरी अपने पति कृष्ण दत्त को हाथी खानि से उबार कर नर तन से दोनों का गन्धर्वी विवाह व दीक्षा मन्त्र सहित राज व भक्ती करने लगे। और द्रोपदी, अहिल्या, तारा, कुन्ती, मन्दोदरी, यह पचकन्या नदी में प्रातः नहाने पहुँच गईं उसी समय नदी में एक महात्मा का लंगोटी साफ करते समय हाथ से छूट कर बह गया सन्त नङ्गे उसी जल में बैठे थे जब महात्मा सब सखियों से वस्त्र पहनने को माँगे, तब अँचरा चीरने फाड़ने को स्त्री अशुभ मानती हैं मगर द्रोपदी अपना अँचरा फाड़ कर फेंक दिया

तब साधु लंगोटी पहने और आशीर्वाद दिये कि जैसा तन तुमने हमारा मून्दा है वैसाही तेरा तन कोई वस्त्र से उघार नहीं कर सकता तब वही चीर दुशासन खैंचते २ हार गया चीर का पहाड़ लग गया मगर तन उघार न हुआ यह सुपात्र सन्त को दान देने का फल है। यह स्वार्थ आज गृही नरों को करने से रानी सुन्दरी व द्रोपदी ऐसा फल मिलैगा। और दो प्रकार के परमारथ एक प्रकार के स्वार्थ यह तीनों छोड़ने से दैहिक ताप व भौतिक तापों से छुट्टी पावोगे। अब पाँचवाँ परमारथ से जनम मरण दुःख छूटने का उपाय सुनो! (रामायण अयोध्या काण्ड दोहा ८८ के बाद) बनवास के समय लक्ष्मण जी निषाद से कहते हैं।

॥ चौपाई ॥

बोले लखन मधुर मृदु बानी। ज्ञान विराग भगति रस सानी ॥१
काहु न कोउ सुख दुख कर दाता। निज कृत करम भोग सब भ्राता॥२
जोग वियोग भोग भल मन्दा। हित अनहित मध्यम भ्रम फन्दा ॥३
जनम मरण जहँ लग जग जालू। सम्पति विपति करम अरु कालू।॥४
धरनि धाम धन पुर परिवारू। सरग नरक जहँलग ब्यवहारू ॥५
देखिये सुनिये गुनिये मन माहीं। मोह मूल परमारथु नाहीं ॥६

दोहा—सपने होय भिखारि नृप, रंकु नाक पति होय।

जागे लाभु न हानि कछु, तिमि परपञ्च जिय जोइ ॥८९॥

अस बिचारि नहिं कीजे रोसू। काहुहिं बादि न देइअ दोसू ॥७
मोह निसाँ सबु सोवनि हारा। देखिय सपन अनेक प्रकारा ॥८

एहि जग जामिन जागहिं जोगी। परमारथी प्रचण्ड वियोगी ॥६
जानिये तबहिं जीव जग जागा। जब सब विषय विलास विरागा॥
होय विवेक मोह भ्रम भागा। तब रघुनाथ[1] चरन अनुरागा॥
सखा परम परमारथु एहू। मन कर्म बचन राम[2] पद नेहू॥

जनम मरण त्रय ताप उपाधी, छूटना जो चाहिये।
कब्बीर साहेब के शरण अक्सीर होना चाहिये ॥ टेक ॥
सहन समता शीलता उर दया धीरज नम्रता। ब्रह्म जग से बीरता सत्संग का बल चाहिये ॥ जनम ॥ १ ॥

कबीर साहेब व रामजी का वचन है बी० रमैनी २३ व विश्राम सा०
कर बिचार जो सब दुख जाई। परि हरि झूठा केर सगाई।
लालच लागी जन्म सिराई। जरा मरण नियरायल आई ॥ बी०
दीरघ रुज कि यह संसारा। औषधि तासु अनूप विचारा ॥विश्रा०

दोहा—को हों आयों कहाँ ते, कित जइहौं का सार।
को मैं जननी को पिता, याको कहिये विचार ॥

अर्थ—रामजी लक्ष्मण से कहते हैं कि हे भाई बड़ा भारी रोग यह संसार ही है इसकी औषधि एक उत्तम विचार ही है।
पिता विवेक सुमति सोइ माता। हरिजन[3] मिलन मोक्ष सुखदाता ॥

टिप्पणी—१–रघु कहिये इन्द्री, नाथ कहिये चेतन पद अविनाशी हृदय निवासी घट २ बासी जो निज स्वरूप है उसी पर शान्ति स्थिति ठहराव होना ही अनुराग व नेह व प्रेम करना है सो विशेष करके व्याख्या सत्यासत्य निर्णय पृष्ठ १७७ में देखिये। २–नौकाल के संयोग व काया माया से रहित जो अपना स्वरूप है वही राम पद है उसी पर शांति होना उत्तम परमारथ है। ३–पारख विचार से जनम मरण दुःख को हरण करै वही हरिजन मोक्ष सुख को देने वाला है।

अर्थ—देह सम्बन्ध चैतन्य स्वरूप ही प्रकृति बश मनुष्य जन्म वासना बश आता जाता हूँ। वासना के त्याग से मुक्त होता हूँ सार चैतन्य स्वरूप है असार देह है (कोई २ प्रेम या ज्ञान को सार कहते हैं) सुमति माता विवेक पिता है इसी का नाम विचार है और विचार ही से सब दुख जा सकता है।

दोहा—खाना चाही गेहूँ[1] के रोटी, चाहे जहर होय।
रहना चहिये शहर[1] माहीं, चाहे कहर होय॥
चलना चाही सीधा[1] सड़क, चाहे फेर होय।
रहना चाही भाइन[1] माहीं, चाहे बैर होय॥

दो प्रकार के क्वारथ दो प्रकार के स्वारथ और पाँचवाँ परमार्थ का विवरण समाप्त॥

(११) प्रश्न—सुख दुख हद बेहद आदि में जीव फँसे हुये का कीर्तन कहिये ?

उत्तर— (कीर्तन) जड़ चेतन निर्णय।

निज ध्यानी को सुख से हटाना रे। कभी दुख का न लगिहैं ठिकाना रे॥ टेक॥ दोहा—ध्यानी कहिये जीव को, सुखहिं जानि लपटान। दिन दिन दुख दूना भयो, पुनि पाछे

१—सब वस्तु व सब जगह व सब रास्ता सबके लिये हितकर नहीं होता क्योंकि प्रकृति सब २ की अलग २ है इसलिये राम अनन्त अनन्त गुण, अमित कथा विस्तार। सुनि आश्चर्य न मानि हैं, जिनके विमल विचार॥ रा०॥ संगति से सुख ऊपजे, कुसंगति से दुख होय। कहहिं कबीर तहाँ जाइये, जहाँ अपनी संगति होय। बीजक साखी २०८॥

पछितान ।। नहीं नारी[१] से नेह लगाना रे ।। निज ।।१।। कूकर सूकर देह में, विषय सुखों को भोगा है। अनेक जनम का बीज बासना, जमा किया नर लोगा है ।। ज्ञान भक्ती से बीज बुजाना रे ।। निज ।।२।। पच[२] मुद्रा में जनम गँवायो, कभी नहीं दुख छुटता है। सुख को छोड़ि ठहर पद अपने, आशा दुख सब कटता है ।। येही शान्ती को दिल में टिकाना रे ।। निज ।।३।। जैसे काँटा पैर में गड़ा भूल से जाय। काँटा से काँटा निकल ज्यों त्यों स्वच्छ रहाय ।। अन्तिम दोनों[३] को निज से बहाना रे ।। निज ।। ४ ।। जल से शुद्ध शरीर होय, सत्याचरण[४] मन जानि। विद्या बुद्धि पवित्र होय, जीव ज्ञान प्रमान ।। सच्चे साधन से मुक्ती कमाना रे ।। निज ।। ५ ।। अष्टयोग[५] अष्टसिद्धि[६] करि, बहुतक नर भटकाया है। देह रहे तक मान बड़ाई, फिर फिर भटका खाया है ।। झूँठे साधन से निज को छोड़ाना रे ।। निज ।। ६ ।। मात पिता गुरु सन्त को, सेवा फल प्रत्यक्षे। पुत्री पुत्र पढाय के, पशु सेवा सुख अच्छे ।।

१—नारी कहिये इच्छा ब्रह्मभ्रम, नारी कहिये स्त्री। २—चाचरी, खेचरी, भूचरी, अगोचरी, सर्व साक्षिनी। ३—शुभाशुभ दोनों काँटा हैं। ४—मन बुद्धि अन्तःकरण की वृत्तियां हैं सो इनके शुद्ध होने से जीव भी शुद्ध होकर बन्धन से मुक्त होता है। ५—अमनस्क, लम्बिका, लय, कुण्डली, सांख्य, हठ और राज योग ऐसे भूठे धोखे अष्टयोग को साधने लगते हैं। ६—अणिमा, गणिमा, लघिमा, गरिमा, हुताशनी, महिमा, अन्तरयामिनी और वाचा सिद्धि यही अष्टसिद्धि व अष्टयोग का अर्थ सत्यज्ञान नाटक ग्रन्थ से विशेष करके देखिये।

सदा हिंसा से रहित रहाना रे ।। निज ।। ७ ।। सुर्ती मदिरा माँस जो, गाँजा सिगरेट शराब । कौन करेगा बन्दगी, तुम तो हुआ खराब ।। ऐसे चिन्ता को शिर से बहाना रे ।। निज ।।८।। अठारह[1] त्रिगुण के परे, पारख पद निज सार । जानि बूझि पगु जो धरे, भूल भ्रम भव पार ।। सातो[2] गुरुवों से न्यारे निज रहना रे ।। निज ।। ९ ।। रामलाल गुरु दया से, परखा दोनों जाल । दुइ के परे निज रूप में, रहते सदा निहाल ।। ऐसी रहनी से छूटे आना जाना रे ।। निज ।। १० ।।

(१२) प्रश्न—मच्छ, कच्छ, बाराह, नरसिंह, बावन, परशुराम, राम, श्रीकृष्ण, बौद्ध, कलंकी ये दस औतार का सिद्धान्त अनुमान रहित यथार्थ में कहिये ?

१—अठारह त्रिगुण के नाम व अर्थ गुरु चेला सम्बाद नामक ग्रन्थ ४०५ पृष्ठ में देखिये । २—जगत में सात गुरुवों का लक्षण २०१ पृष्ठ गुरुचेला सम्बाद में देखो । छठवाँ गुरु कहते हैं सबको छोड़ एक आत्मा व्यापक से दिल जोर, तब कबीर साहेब कहते हैं कि एक आत्मा खावे सबका पेट भर जाय, एक के बीछी छेदै सबके चढ़ जाय तब तो आत्मा एक है नहीं तो आत्मा अनेक है । सातवाँ गुरु कहते हैं एक ब्रह्म सत्य जगत मिथ्या, ब्रह्म से जगत पैदा भया फिर ब्रह्म ही में लीन । तब कबीर साहेब कहे कि जीव अनेक देह रूपी घड़ा फूटा पृथ्वी रूपी ब्रह्म में लीन हुआ । तब वैराग्य लेना और साधन सब मिथ्या हुआ, फिर अद्वैत ब्रह्म एक में आवाज होता नहीं, उपदेश किसको करते हो ? क्या उसमें ब्रह्म कम व्यापक है सर्व देशी ईश्वर आत्मा ब्रह्म, भूत प्रेत, व्यापक व्याप्य सर्वज्ञ मानने में बहुत शंका पड़ती है इस लिये कबीर साहेब के न्याय से पाँच तत्व जड़ और अनेक चेतन जीव एक देशी प्रत्यक्ष वर्तमान में मानने से कोई शंका ही नहीं ।

उत्तर—

जब बालक माता के गर्भ बच्चे दानो में पहिले मछरी के आकार का लम्बा रहता है। वही मच्छ औतार है। दूसरा इन्द्रिये सिमटा हुआ कछुआ के आकार गोल पिण्ड होने से कच्छ औतार जानिये। तीसरा औतार जब बालक पैदा हो चुका तब हाथ पैर मुँह जमीन में लगे हुये मल मूत्र से सने हुये को सूकर (वराह) औतार कहते हैं। चौथा औतार जब बालक बकैइयाँ पृथ्वी पर चलता और निर्भय हो दोनों आँख से ताकता झबरहा बाल सिर पर सिंह के आकार का होने से नरसिंह औतार मानिये। पाँचवाँ औतार जब बालक पृथ्वी पर ठाढ़ २ चलता है तब वही बावन अंगुल का होने से बावन औतार मानिये। छठवाँ औतार जब बालक चौदह वर्ष के अन्दर रहता है तब क्रोध कहिये अज्ञान दशा से किसी जीव को मार पीट किया करता है यही परशुराम औतार है। सातवाँ औतार जब अठारह वर्ष से अधिक हुये ब्याह किये राज नीति धर्म से प्रजा पालन आदि किये तब राम औतार जानिये। आठवाँ औतार जब अधिक नाती पनाती हो गये ५६ कोटि यदुवंशी आपस में शराब पी २ कर जूझे कृष्ण न रोक सके तब वही कृष्ण औतार है। नौवाँ औतार जब वृद्ध हुये कान आँख आदि सब इन्द्रिये जबाब देने लगी तब मौन रूप होकर वृक्ष के नीचे बैठ गये यही बौद्ध औतार है। और जब राम ने बालि को छल से मारा तब कलंक लगा वही बालि बधिक होकर बौद्ध

रूप कृष्ण के चरण में मारा तब कृष्ण मरे कलंक उतरा वही कलंकी औतार दसवाँ है। दश औतार ईश्वरी माया, कर्ता कै जिन पूजा। कहहिं कबीर सुनो हो सन्तो! उपजै खपै सो दूजा ॥ (बीजक शब्द ८)

फूले कमल सोह सर कैसे। निर्गुण ब्रह्म सगुण भये जैसे ॥
निर्गुण से जब सगुणहिं भयऊ। तब कहां एक रस रहिऊ ॥
तब उत्पत्ति परलय में आवा। अचल ब्रह्म काहे को गावा ॥
(ऊधौ गोपी सम्वाद)

(१३) प्रश्न—पारवती के भग शिवजी के लिङ्ग पर गङ्गाजल चढ़ाने से जगदीश भगवान क्यों ख़फ़ा होते हैं ?

उत्तर—दोहा—हरि चरणोदक जानिके, शङ्कर राखा शीश।
सो अब लिङ्ग चढ़ावहीं, ख़फ़ा होहिं जगदीश ॥

अर्थ—राजा बलि के यहाँ साढ़े तीन परग पृथ्वी नापने के लिये बावन भगवान औतार रक्खे तब ब्रह्मा ने भगवान का चरणोदक उतार कर अपने कमण्डल में रख लिया और शिवजी वही चरणोदक अपने माथे पर चढ़ाया यानी भगवान के चरणोदक का आदर किया। अब मूरख लोग भगवान का चरणोदक जो गङ्गा जल है वह महादेव के लिङ्ग व पारवती जी के भग बनाकर चढ़ाते हैं यानी भगवान के चरणोदक व महादेव-पारवती के इज्जत को माटी में मिलाया, निरादर किया, जब महादेव जी खुद कैलाश पर्वत पर मैत्री ऋषि को उपदेश करते हैं कि यह जो देह है वही देव मन्दिर है और इस

देह में जो जीव है वही शिव है इसी को सोहं भाव से पूजन करो इसका प्रमाण गुरु चेला सम्वाद में विशेष है सो जानिये, और भागवत ५ स्कन्ध चौदह अध्याय ३८-४० श्लोक में लिखा है कि मूर्ति पूजा त्रेता युग से चली है।

दोहा—उरग[1], तुरग[2], नारी, नृपति, नर नीचो हथियार।
तुलसी निशिदिन परखत रहिये, इन्है न पलटत बार॥

(१४) प्रश्न—शूर वीर और सत्यवादी पुरुष कैसे होते हैं?

उत्तर— (सवैया)

भानु प्रकाश भयो जब से, तब चन्द्र प्रकाश लखाय परै न।
सिंह आवाज करैं बन मा, तब दूसर शब्द सुनाय परै न॥
शूर सिङ्गार करै रण को, तब नारि सिंगार पे ध्यान धरै न।
हारिल की प्रण है लकड़ी, कदली दुजे बार के फेर फरै न॥
बात कही जो असीलन[3] की, मुख से कहिके बदले कबहूँ न।

१५—प्रश्न (क्षत्री के छः गुण कौन २ होते है ?)

माने ब्राह्मण माने गाय, शूर होय औ ऋणी डेराय।
काछ कै पोढ़ बात कै धनी, छ प्रकार के क्षत्री गनी॥

अर्थ—त्रेता में जब राम ने रावण को मारा तब ब्रह्म हत्या लगी तब पुराण के मानने वाले पण्डितों का कथन है कि वशिष्ठ जी कहे कि तुम सवा लाख ब्राह्मण का यज्ञ करो

१—उरग कहिये साँप। २—घोड़ा। ३—असल पुरुष सत्यवादी।

तब राम कहे कि गर्ग, गौतम, साँडिल यही तीन घर ब्राह्मण हैं तो सवा लाख ब्राह्मण कहाँ मिलैंगे तब बशिष्ठ जी कहे कि सब जातिन को पकड़ २ कर जनेऊ पहिना कर ब्राह्मण बना लेंगे तब जो दूब छोलते मिले उनका नाम दूबे रक्खा जो नगारा बजाते मिले उनको नगरहा मिश्र, ईंटा पाथते मिले उनको इँटार पाँडे, जो मनुष्य हल जोतने में एक भैंसा एक बैल भचियाये मिले, (बैल को बो, भैंसा को झा) उनका नाम बोझा रक्खा ऐसे अनेक ब्राह्मण बनाये गये इनमें वैश्य शूद्र का कर्म मिलता है इनका नाम ब्राह्मण नहीं, नौ गुण को धारण करै वही ब्राह्मण है। जैसे—गान्धी जी, कबीर साहेब, सुदामादि ऐसे गुण धारी ब्राह्मण साधु गुरु का सेवा करे छः गुण को धारण करै वही शूर वीर है करजा को डरे काक्ष के पोढ़ राम जी जंगल में शूर्पणखा के मिलने पर ब्याह नहीं किया। बात के धनी राजा दशरथ—

रघुकुल रीत सदा चलि आई। प्राण जाय पर बचन न जाई ॥

(पंडित के गुण वर्णन)

"यस्य बुद्धिः पण्डा स पण्डितः" ये शास्त्रकार ने कहा कि जाकी बुद्धि बड़ी पुष्ट सो पण्डित।

(१६) प्रश्न—दूध और खून पीने का विचार किसने किया ?

उत्तर—

महात्मा गांधी जी ने कहा है कि मैंने गुरु नहीं बनाया, किन्तु मुझे कोई गुरु मिले हैं तो वे हैं—रायचन्द भाई। ये

रायचन्द भाई पहले बम्बई में जवाहरात का व्यापार करते थे एक ब्यवपारी आया रायचन्द से जवाहरात खरीदा। लिखा पढ़ी हो गया सुबह होने पर ब्यवपारी को ५०-६० हजार रुपया का घाटा होने लगा, रायचन्द से ब्यवपारी कहता है कि क्या करैं लिखा पढ़ी हो गया अब माल अवश्य लेना पड़ेगा। ब्यवपारी का चेहरा बहुत उदास देखकर रायचन्द चौपड़ी को उठाया और जो लिखा पढ़ी हो गया था उसको फाड़कर फेंक दिया कहा कि मैं दूध पीता हूँ खून नहीं। सच है!

दोहा—कबीर आप ठगायाँ, और ठगे न कोय।
आप ठगे सुख होत हैं, और ठगे दुख होय॥

इसी पर दृष्टान्त—एक महात्मा अपने घर पर दुकानदारी का काम करते थे। एक गाहँक रोज के रोज खोटे पैसे देकर सौदा ले जाया करता था। एक दिन महात्मा डोल मैदान चले गये, दूसरा मनुष्य दुकान पर बैठा था। गाहँक फिर वही खोटे पैसे देने लगा दुकानदार ने कहा यह पैसे खोटे हैं नहीं लूँगा इतने में महात्मा आ गये और वही खोटे पैसे दुकानदार ने दिखाया महात्मा बोले यह रोज ही खोटे पैसे देकर सौदा ले जाता है इसका पैसा वह जमीन में गाड़ा है देखिये। दुकानदार ने कहा यह खोटे पैसे क्यों लेते हो? महात्मा बोले अगर हम इसका खोटे पैसे न लूँ तो यह कहीं जाकर दूसरे को ठगेगा, इसलिए आप ठगे सुख होत हैं, और ठगे दुख होय। सन्त महात्मा इसी प्रकार बहुत से जीवों को खोटा खरा परखाय कर दुख से बचाते हैं।

१७—(भजन)

जोगिया खेल्यो बचाय के नारी नयन चलै बान ॥टेक॥
नारद कै गति मति कर डारिस, भा अपमान जहान ।
चन्द्रकला[1] में दाग लगाइस जल मा इन्द्र लुकान ॥जोगिया॥१॥
धूनी छोड़ि मछन्दर भागे, गोरख का लपटान ।
शिव योगी पर किहिस प्रेरना, छोड़ि के भागे ध्यान ॥जोगिया॥२॥
श्रृङ्गी ऋषि को भृङ्गी करि डारिस, पारासर भरम भुलान ।
राम लखन तपस्वी दोनो भइया, सीतक दुख हैरान ॥जोगिया॥३॥
जोगी यती सती सन्यासी, सबकै मरदिस मान ।
नर बपुरे कै कौन कहावे, मारिस बड़े २ ज्ञान ॥ जोगिया ॥४॥
धरमदास बिनवैं कर जोरे, अन्ते नाहीं ठेकान ।
साहेब कबीर चरण के पीछे, सूरति[2] मोर लुकान ॥जोगिया॥५॥

१८—(धर्मदास जी के विनय शब्द)

भक्ति दान गुरु दीजिये देवन के देवा ॥ टेक ॥ आठ पहर

१—चन्द्रकला कहिये चन्द्रमा में ग्रहण लगता है दूसरा अर्थ बृहस्पति के चेला का नाम चन्द्रमा था जो अपने गुरु पत्नी संग बिगड़े।

२—राजा धर्मदास से परीक्षा करने के लिए दो नवजवान वेश्या कबीर साहेब भेजे एक कोठरी में बन्द कर दिये और रात भर दोनों वेश्या नाच गान इत्र फुलेल से सेवा किये मगर धर्मदास के काम कला नाग नहीं जागा तब धर्मदास सुबह साहेब के पास बन्दगी करने गये तब कबीर साहेब पूछते हैं (धर्मदास रात कहो कैसी) उत्तर में (एक ओर माय एक ओर मौसी) तब कबीर साहेब धर्मदास को भेष चपरास लँगोटी देकर पारख यथार्थ उपदेश कर दिये।

बत्तिस घरी, करिहों गुरु सेवा[1] ॥ चरन कमल छूटे नहीं, अन्ते नहिं भेवा ॥ भक्ति ॥ १ ॥ तीरथ ब्रत हम न करब, नहिं पाहन पूजा ॥ मन्सा बाचा कर्मना, हमरे देव न दूजा ॥ भक्ति ॥ २ ॥ सुख सम्पत्ति आनन्द घना, सुन्दर बर नारी ॥ सपने इच्छा न चले, गुरु दया तुम्हारी ॥ भक्ति ॥ ३ ॥ अष्ट सिद्ध नव निद्ध है बैकुण्ठ के बासा ॥ सो साहेब माँगो नहीं, जब लग घट स्वाँसा ॥ भक्ति ॥ ४ ॥ जेहि खोजत ब्रह्मा थके, सुर नर मुनि देवा ॥ सोई वस्तु सहजे मिले, करिहों गुरु सेवा ॥ भक्ति ॥ ५ ॥ धर्मदास की बीनती, साहेब सुन लीजे ॥ दरश देव पट खोलिके, आपन करि लीजे ॥ भक्ति ॥ ६ ॥

१६—(गजल कीर्तन)

यदि भव बन्धन से बचना है, गुरु पद में ध्यान लगा लेना ॥ यह जीवन नइया डूब रही, जल्दी से पार लगा लेना ॥ टेक ॥ जो लख चौरासी घूमि २ यह, नर तन तुमने पाया है ॥ विष सम विषयों से बच २ कर, यह जीवन सफल बना लेना ॥ यदि ॥ १ ॥ तन धन कुटुम्ब अभिमान त्याग, यह संग न तेरे जायेंगे ॥ जब काल की कुरकी आयेगी, अपना सामान बचा लेना ॥ यदि ॥ २ ॥ छल मोह क्रोध पाखण्ड त्याग अरु, सत्संगत में जा २ कर ॥ निज आतम को परमातम जान, यह ज्ञान का रंग चढ़ा लेना ॥ यदि ॥ ३ ॥ विज्ञानानन्द समय

१—कबीर साहेब के गहनि कहनि रहनि रहस्य धारण करने का नाम चरण कमल का पकड़ना व गुरु सेवा है ।

ऐसा अब, बहुरि न मिलने वाला है ॥ बस यही परम पुरुषार्थ है, जीते जी मुक्ती कमा लेना ॥ यदि ॥ ४ ॥

(२०) प्रश्न—क्या साँच है क्या झूठ है सो प्रमाण सहित कहिये ?

उत्तर—चौपाई रामायण उत्तर काण्ड दोहा ६० के बाद ।

झूठै लेना झूठै देना । झूठै भोजन झूठ चबैना ॥

अर्थ—साँच चैतन्य अविनाशी जिन्दा जीव प्रत्यक्ष मनुष्य काया सहित विषय बुराई से रहित को छोड़कर ताजिया, फोटू, समाधी, गोबर माटी के पार्थी काठ पाथर पीतर सोना चाँदी कसघड़ व ठठेर बढ़ई के बनाये हुये जगन्नाथ जी, राम, कृष्ण मुर्दो को, झूठ ही भोजन खिलाते झूठ ही बुलाते झूठ ही पुत्र धन स्त्री माँगते और झूठ ही कहते हैं ।

दोहा—कथा बिसरजन होत है, सुनो वीर हनुमान ।
आसन को प्रभू जाइये, सखा सहित भगवान ॥

घट २ राम व्यापक अपने कहते हैं परन्तु अपने घर भगवान को झूठ ही बुलाये, झूठ ही वापस कर दिये, बिना पारख जैसे बालक धूल की रसोई फूटे खपड़े में बनाता है और झूठ ही परस कर खाते खिलाते हैं पेट कैसे भरै यही दशा अज्ञानी मनुष्यों की है सो जानिये । इससे तो अच्छा विद्या को पढ़े पढ़ावे या सद्ग्रन्थों का पाठ करे सन्तों का सेवा सत्संग करे या साग सबजी गेहूँ चना आम फल फूल पत्ती आदि बोवे सींचै मेहनत करै तो कम से कम अन्न, भूसा पैरा लकड़ी कुछ न कुछ देगा यह मुर्दा कुछ भी नहीं देता न बालकों को पढ़ावेगा सो—

दोहा—पहिले छावे भूस भुसैला, तब बैलन के वारी।
तिसके पीछे राम रसोइयाँ, तब छावै चौपारी॥
मात पिता औ सन्त गुरु, पुत्री पुत्र बढ़ावे।
पशुओं का सेवा करै, सदा लाभ नर पावे॥
सन्तों का सत्संग करि, नीर क्षीर अलगावे।
सद्ग्रन्थन का पाठ नित, ध्यानी गुरु मिल जावे॥
ध्यानी गुरु ध्यान से न्यारा, समझ लेय भव पार।
रहित वासना निज पर ठहरे, फिर न बहै दुइ[1] धार।

(२१) प्रश्न—जगत साकार को देख कर अनुमान करते हैं कि इस जगत का रचने वाला कोई ईश्वर निराकार होगा जैसे घड़ा को देखकर रचने वाला कुम्हार का अनुमान होता है?

उत्तर—

निराकार ईश्वर से साकार जगत् की उत्पत्ति सदा से ही असम्भव है। साकार २ संयोग बनता। निराकार साकार का क्यों नियंता॥ न्यायनामा॥ घड़ा और कुम्हार दोनों साकार प्रत्यक्ष हैं इसलिये साकार जगत को रचने वाला साकार ईश्वर प्रत्यक्ष होना चाहिये तब दृष्टान्त सम्भव, नहीं तो घड़ा और कुम्हार का दृष्टान्त देना असम्भव मिथ्या होता है जैसे साकार माता पिता से साकार पुत्र पुत्री पैदा होते हैं जब २ चार

टिप्पणी १—निज स्वरूप को भूल कर खानी, वाणी, काल, अकाल, द्रव्य, अद्रव्य, स्वार्थ, धर्मार्थ, हद्द, बेहद्द, पाप, पुण्य में जीव बह कर चार खानियों में चक्कर दे त्रयताप दुख सहते हैं।

ऋषि अंगिरादि ब्रह्मा विष्णु आदि इस पृथ्वी पर माता पिता से पैदा भये तब तब इस जगत को देखकर अनुमान किया कि इस जगत का रचने वाला कोई परमात्मा होगा बस उन्हीं के पीछे भोले भाले अबोधी जीव भी बकते चले आते हैं कि कोई ईश्वर जगत का रचने वाला होगा ? विचार तो किया नहीं कि जब ईसाई लोगों में बायबिल पुस्तक ईसामसीह गाड को मानते हैं, और सूकर गाय खाते हैं एक मालिक जगत का रचने वाला यह हुये दूसरे मालिक मुसलमान कहते हैं कि हम खुदा व कुरान पुस्तक मानते हैं, और खुर फटी हुई जानवरों का मांस खाते हैं सूकर का खुरफटी है उसका मांस हराम है नहीं खाते तीसरा मालिक हिन्दू हुये यह वेद पुस्तक ईश्वर को मानते हैं हिन्दू लोग सूकर को देव स्थाने चढ़ाते और खाते हैं चौथा मालिक सन्त हुये यह न मांस मदिरा खायँगे न स्त्री भोग करैंगे जैसे दयानन्द स्वामी कबीर साहेब आदि ये चार मालिक अपना अपना पक्ष तीन काल में नहीं छोड़ैंगे तो जगत का मालिक थापना, कल्पना मिथ्या हुआ इस लिये मुख्य मुख्य थोड़े ही में कहा इसके अलावा नाना मत मानने वाले १८ पुराण १८ मालिक जगत का रचने वाला मानते ही हैं जब मुसलमान कहे कि हमारा कुरान आसमान से गिरा है तब ईसाई हिन्दू यह भी वही झूठ बकने लगे। मनुष्य प्रत्यक्ष वेद कितेब बायबिल को बनाता छापता बाँचता पढ़ता पढ़ाता है इसको नहीं मानते, एक ने झूठ ही गप्प मारा कि हमारे अङ्गना में सरसों

का पेड़ है नौ मन सरसों सुबह, नौ मन शाम को झरता है दूसरे गप्पी ने सुना तो वह कहता है कि एक मिर्चा लाल तोड़ कर नदी के ऊपर रख आये हैं पुल्ह बँध गया उसी पर सब गाड़ी बैलादि आते जाते हैं। तब वह सरसों वाला गप्पी बोला कि मिर्चा का पेड़ कहाँ है चलो दिखावो तब वह मिर्चा वाला कहता है कि उसी सरसों पेड़ के बगल पास ही में है ? सज्जनों ! विचार करो ! झूठ मामिला झूठही बात से कट गया। जैसे मुहम्मद साहब मछली दरिया से पकड़ कर सूर्य से भूँजकर खा गये तब हिन्दू बोले कि हनुमानजी सूर्य ही को लाल फल समझ कर लील गये यही सब गप्प मारना है इसका यथार्थ यही है कि देवता दैत्य, स्त्री पुरुष, बीज वृक्ष, कारण कारज आदि का बनाने वाला कोई नहीं यह अनेक जोड़ा अनादि होने से संयोग का बियोग हुआ करता है जिसका संयोग नहीं उसका तीन काल में बियोग नहीं ईश्वर कृत वेद जगत् है तो कुरान बायबिल का कानून खुदा गाड तुरुक इसाई का खान पान चाल चलन रहनी गहनी आर्य समाजी ऐसा होना चाहिये तो ऐसा है नहीं एक बादशाही में तमाम बाद-शाहै बादशाह हो गये इसलिये अनन्त जीव, पाँच तत्व सूर्य चन्द्र तारा गण पहाड़ समुद्र आदि का बनाने वाला कोई गाड ईश्वर खुदा नहीं, जो अनेक प्रकारों से जगत की उत्पत्ति वर्णन करते हैं वह सब अपनी २ कल्पना से वर्णन किये जब देवता दैत्य अनेक जोड़ा दोनों अनादि हैं कभी

तीन काल में मिट नहीं सकते तब जगत कर्ता मानना कहना भूल मिथ्या का बाप ही हुआ। इसी से तुलसी सूर, कबीर शंकराचार्य आदि के कथन से कर्ता खण्डन मुक्तावली गारी व तिमिर भास्कर ग्रन्थ में देखिये वहाँ विशेष करके सत्यार्थ प्रकाश का खण्डन वर्णन है। एक तरफा बात है उधर से ईश्वर खुदा कोई बात कहने को नहीं। आपस में चोंच बकवाद किया करैं अपनै व्यापक व्याप्य मानिये अपनै अलपज्ञ सरवज्ञ मानिये अपनै सर्व शक्तिमान अन्तर्यामी मानिये अपने एक अनेक, खण्ड अखण्ड मानिये मगर उधर से ईश्वर अल्लाह कुछ नहीं आवाज देगा यही एक तरफा बात है। मुर्दा ईश्वर व्यापक कभी आवाज न दिया है न देगा। इसी पर कबीर साहेब कहते हैं। एक कहौं तो है नहीं, दोय कहौं तो गारि।। है जैसा रहै तैसा, कहहिं कबीर बिचार ।। बीजक साखी १२० ।।

टीका—कबीर साहेब कहते हैं कि जो मैं कहूँ जीव एक है तो एक है नहीं, अनेक जीव प्रत्यक्ष अलग२ भोग है, अगर अनेक जीव के ऊपर दोसरा कर्ता मानता हूँ तो गारो परता है यानी धोखे अनुमान में जीवों को छोड़ना है। यह जगत जैसा है वैसा रहेगा, मानुष, पशु, अण्डज, उष्मज यही चार जाति अनादि के ऊपर दोसरा कर्ता कोई नहीं सिर्फ बना चीज बिगडैगा यही विचार कर कबीर साहेब कहते हैं। वेद कितेब दोऊ फन्द पसारा। तेहि फन्दे परु आप बेचारा।। कहहिं कबीर ते हंस न बिसरे, जेहिमा मिलै छोड़ावन हारा ।। बीजक शब्द ३२ व। ११३ का प्रमाण।

शब्द–झूठहिं[1] जनि पतियाउ हो, सुनो सन्त सुजाना।
तेरे घटही में ठग पूर है, मति खोवहु अपाना॥

झूठे को मण्डान है, धरती असमाना। दसहुँ दिशा बाकी[2] फन्द है, जीव घेरे आना॥ जोग जप तप संयमा, तीरथ ब्रत दाना। नौधा बेद कितेब है, झूठे[2] का बाना॥ काहू के वचनहिं फुरे, काहू करामाती। मान बड़ाई ले रहे, हिन्दु तुरुक जाती॥ बात ब्यौंतैं असमान की, मुद्दत नियरानी। बहुत खुदी दिल राखते, बूडे बिन पानी॥ कहहिं कबीर कासों कहौं, सकलो जग अन्धा। साँचे[3] से भागा फिरै, झूठे[2] का बन्दा॥

२२—(कँहरा)

नीके मानो मोर सलहिया हो बलमवाँ अरजी॥ टेक॥ खाना होय गुस्से को खावो, क्षमा गङ्ग पिये छूटै फर्जी[4]॥ नीके॥ १॥ पहिरन का विद्या[5] निज वस्तर जनम सफल हो तुम्हारी मरजी॥ नीके॥ २॥ त्रिगुण माया में भूल्यो जुगन जुग, गुरू के शरण में तुम्हारी मरजी। नीके॥ ३॥ जाना

१—अनेक जाति, बरण, मामा फूफा अनुमान कल्पना से माना हुआ ईश्वर खुदा शैतान प्रेत, राम, सीता, हसन हुसेन पारथी आदि मुर्दा का पूजना पुकारना झूठ हैं झूठे मुर्दा का बन्दा बनना है। २—मन, बासना गुरवा, पण्डवा, पण्डित, सोना, स्त्री, काम क्रोध ये सब यम कहिये काल कहिये ठग कहिये इनसे अपने को बचावो ३—साँच अपना जीव चैतन्य पारख स्वरूप है इसी पर ठहरो। झूठे का बन्दा मत बनो। ४—शराब, तम्बाकू, भाँग, मांसादि बुरी वासनायें यही फर्जी है। ५—भेद मिट जाने का नाम विद्या है।

होय सत्संग में जावो, पार होय भव नइया अरझी ॥ नीके ॥ ४ ॥ धरना होय वैराग्य को धारो, होय विवेक मन माया लरजी ॥ नीके ॥ ५ ॥ द्वैत[1] भाव दुविधा दुइ[2] त्यागें, छूटै सही चौरासी[3] घर जी ॥ नीके ॥ ६ ॥ रामलाल निज हृदय भीतर, अजर अमर गुरु पायों दर्जी ॥ नीके ॥ ७ ॥

२३—(राग सोरठा)

सो नइया बीचे नदिया हो डूबी जाय ॥ टेक ॥ चिउँटी चली अपने नइहर नौ मन काजल लाय । ऊँट को मारि बगल तर लीन्हा, हाथी लियो लटकाय ॥ सो ॥ १ ॥ एक अचरज मैं ऐसा देखा, गदहा के दो सींग । चिउँटी के गल रस्सा लागल, खींचत अर्जुन भीम ॥ सो ॥ २ ॥ एक चिउँटी के मूत से बहै नदी और नार । पापी नइया पार उतरि गये, धरमी डूबे बिच धार ॥ सो ॥ ३ ॥ एक अचम्भा ऐसा देखा कुँआ में लागी आग । पानी जरिके कोइला होगया, मछली खेलैं फाग ॥ सो ॥ ४ ॥ एक चिउँटो के मृत्यु भये ते, लाखों गिद्ध अघाय । वाहू में कछु बाकी रह गयो, तापर चील्ह मेड़राय ॥ सो॥५॥ कहहिं कबीर सुनो भाई साधो यह पद है निर्बानी । जो यह पद को अर्थ लगावे, सो है महा मुनि ज्ञानी ॥ सो ॥ ६ ॥

१—अपने दुख सुख ऐसा दुसरे का दुख सुख नहीं समझना यही द्वैत भाव है। २—खानी वाणी जाल, जीभ लिङ्ग के स्वाद, पाप पुण्य आदि जोड़ा बहुत हैं इनसे रहित हो स्वस्वरूप स्थित शान्ति सुख है। ३—मानुष, पशु, अण्डज तन धारी। उष्मज खानि राशि हैं चारी ॥

टीका—मन, चित्त, बुद्ध, अहंकार, शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध यही नौ मन काजल है और यही नव के नइया में अनेकों जीव रूपी नदियाँ डूबी जा रही हैं ॥ टेक ॥ वासना वश जीव रूपी चींटी संसार रूपी नइहर में वही नौकाल नौ मन काजल लगाये हैं। ऊँट कहिये अठारह पुराणों का गप्प मानन्दी न्यारे २ बगल में लिये हैं। हाथी कहिये चार वेद छः शास्त्र का मत न्यारे २ मन्त्र यन्त्र आदि माला सहित हाथ में लटकाये गाँव २ फिरते हैं ॥ १ ॥ मन रूपी गदहा के राग द्वेष रूपी दो सींग हैं ओंकार ब्रह्मरूपी चींटी के गले में कर्मयोग उपासना रूपी रस्सा लगाये हरिहर ब्रह्मादि और शुकदेव, गोरख, सनकसनन्दनादि अर्जुन भीम खेंच रहे हैं मुक्ती के लिये ॥२॥ ओंकार ब्रह्म रूपी चींटी के आवाज से चार वेद पैदा भये यही मूतना है। इसके बाद छ शास्त्र १८ पुराण नौ व्याकरण यही नदी नाला पानी वाणी से भर कर संसार में बह चला। पापी नइया कहिये पारखी विचारवान सन्त नौकाल से रहित होकर पार भये, धरमी कहिये स्त्री के विषय वासना में लिप्त रहने वाला जीव बीच धारा कहिये गर्भ वास में डूबे ॥ ३ ॥ कुँआ कहिये कुमार्ग पर चलने वाले मनुष्य के अन्दर काम क्रोध नौकाल की चाहनारूप अगिनी लगी तब पारख विचार रूप पानी जरि कर कोइला हुआ यानी गर्भबास में पड़ा, मछली कहिये नौकाल में फँसे हुये गोरू लोग जीवों पर ठगाई करते हैं प्रत्यक्ष चैतन्य को छोड़ाय कर ओंकार ब्रह्म सत्य पुरुष अनुमान मुर्दा के खूँटा में बाँधते हैं या सात काल में फँसे हुये गुरवा लोग सातौ खूँटा में बाँधते हैं यही फाग का खेलना आँख में धूल झोंकना है ॥ ४ ॥ जब इस जीव को पारखी गुरु मिले तब बोध होने से ओंकार रूपी चींटी मर गई यानी अभाव हुआ तब मन रूपी गिद्ध जो लाखों जगह नौकाल की माया में दौड़ता रहा सो अघाय गया। वाहू में कछु बाकी रहि गयो, अगर संशय बासना सन्धि कछु बाकी रह गई तो चित्त चंचल रूपी चील्ह मेड़राय यानी बार बार गर्भवास में आना पड़ैगा ॥५॥ कहहिं कबीर तब बाचिहो, जब सकलो जरि जाय। कबीर साहेब कहते हैं

कि जब सकलो वासना इच्छा खतम नाश हुआ तब मुक्त प्रत्यक्ष ही है यही अजर, अमर अविनाशी जीव निरबान पद है। ऐसा अर्थ जो लगावे, रहस्य धारण करे वही महा मुनि ज्ञानी पुरुष है ॥ ६ ॥

२४—(भजन दादरा)

बजर दै कै छतिया होना फ़क़ीर ॥ टेक ॥ नखरा बनाये राम न मिलहैं, खोज ले बन्दे तू अपना शरीर ॥ बजर ॥१॥ दुनियाँ दौलत माल खजाना, छोड़ि के चला सुलताना अमीर ॥ बजर ॥ २ ॥ गंगन मन्दिल बिचे ज्योति[१] जलत है, गङ्गा[२] जमुन सुरतिया के तीर ॥ बजर ॥३॥ नौ मन सूत अरुझि नहिं सुरझे, नौ[३] को छोड़ि निज पद थीर ॥ बजर ॥४॥ धरमदास बिनवैं कर जोरे, साँचा वचनियाँ कहिगे कबीर ॥बजर॥५॥

२५—(भजन चेतावनी)

घरही में तीरथ बनैबै, मन्दिर हम का करै जैबै ॥ टेक ॥ पाथर कै देवा डोलै न बोलै, काहेक नेह लगैबै ॥ मन्दिर ॥१॥ सासू का गौरा ससुर महादेवा, स्वामी का ईश्वर बनैबै ॥ मन्दिर ॥२॥ तीरथ में पण्डा जग भरमावे, उनहूँ से दाम बचैबै ॥ मन्दिर ॥३॥ ठग बरवार तीरथ में लागैं, काहे का जेब कटैबै ॥ मन्दिर ॥ ४ ॥ लागे बैरागी हनुमानगढ़ी पर, सखियन कै इज्जत बचैबै ॥ मन्दिर ॥ ५ ॥ तीरथ में बुड़वा

टिप्पणी–१–पाँच तत्त्वों का प्रकाश स्वाँसा चढ़ाय के ब्रह्माण्ड में देखना, इस ज्योति प्रकाश का जनैया जीव न्यारा है। २–इङ्गला पिङ्गला सुषमना ये तीन नाड़ी के चक्कर में मत फंसना गुरवा लोग इसी में फँसाते हैं। ३–नौकाल के अर्थ ७-८ पृष्ठ में देखिये।

बुड़की मारे, काहे का जान गँवैबै ॥ मन्दिर ॥ ६ ॥ खेलै जुवाड़ी दाँव लगाये, उनहूं से धन मन बचैबै ॥ मन्दिर ॥७॥ नशा माँस औ घूस जो खावें, उनहूँ से अंग हटैबै ॥मन्दिर॥८॥ कहहिं कबीर जे नौ को छोड़ै, मनमाने फल पैबै ॥मन्दिर॥९॥

२६—(कँहरा

जेकर बिगड़ल बा ईमनवां भक्ती नाहीं भावे राम ॥टेक॥ मीन माँस कै भोजन बनावें, चुरइल बैठिं रसोइयां ॥ भूत-प्रेत सब जेवन लागे, दानव करैं बखनवाँ, जनियाँ बनलै भल भोजनवाँ ॥भक्ती॥ १ ॥ पराया पुत्र मार के लावें दया नहीं बेइमनवाँ ॥ आपन पुत्र बीमार जो होवें, तुरत होय बेदनवाँ दौरैं सोखवा के देवथनवां ॥ भक्ती ॥२॥ ऊपर २ बने दयालू दान पुन्य मरदनवाँ ॥ माँस अहारी घर भर बन के गुरु करै मछखनवां कँहवा लगिहैं तोर ठेकनवाँ ॥ भक्ती ॥ ३ ॥ बुरा कर्म से नहीं लजाते, भले से मुँह छिपकाते ॥ ब्राह्मण-क्षत्री-वैश्य बने सब जातिन के अभिमनवाँ, सेवा थुकिहैं सब जहनवाँ ॥ भक्ती ॥ ४ ॥

२७—(भजन चेतावनी)

बकरा कहता है गोहराई सब जग लगै हमारो भाई ॥टेक॥ घर में लड़के पैदा होवैं लेकर दूध पिलाई ॥ जब तक लड़के दूध न पावैं किहें किहें चिल्लाई ॥ बकरा ॥ १ । जेहिं घर बकरी पाले होवें अधिक पाप गरुवाई ॥ लेकर डोरी हाथ में

देवैं चिकवा चले घिसियाई ।। वकरा ।। २ ।। माटी के देवथान बनावैं देवी ताहिं कहाई ।। मूड़ि काटि थाने धर देवैं लेव कालिका माई ।। बकरा ।। ३ ।। जैसे खून मांस है तुम्हरो, वैसे हमरो भाई ।। आपन मांस नापाक करत हो, हमरो हँसि हँसि खाई ।। वकरा ।। ४ ।। जो तुम हमका कटबौ प्यारे हमहूँ काटब भाई ।। कृष्ण कबीर गोहराय कहत हैं बदला कहूँ न जाई ।। बकरा ।। ५ ।।

२८--(भजन)

हम सन कौन बड़ो पर वारी ।। टेक ।। सत्य है पिता धर्म है भ्राता, लज्जा है महतारी । शील बहिन सन्तोष पुत्र है, क्षमा हमारी नारी ।। हम ।। १ ।। आशा सासु त्रिष्णा सारी, लोभ-मोह ससुरारी । अहँकार हैं ससुर हमारे सब जीवन अपकारी ।। हम ।। २ ।। ज्ञानी गुरु बिबेकी चेला सदा रहैं ब्रह्म-चारी । काम-क्रोध घट चोर वसत हैं, इनका डर है भारी ।। हम ।। ३ ।। मन दीवान सुरति है राजा, बुद्धि मन्त्री भारो । सत्य[1] ज्ञान की बसो नगरिया, साहेब कबीर भवतारी ।।हम।।४।।

२९--(गारी)

सब सन्तन को नेवति बुलाई, चाह से चरण पखारी जी ।।१।।
सेवक चतुर लेत चरणोदक, अचल करत भय हारी जी ।।२।।

टिप्पणी—१—नौ काल व नौ कोश व नौ मन सूत में अरूझे हुये से रहित होकर नौ गुण धारण करै सत्य चैतन्य अविनाशी पर स्थित होय वही सत्य ज्ञान नगरिया बसना है ।

शील सिंहासन डारि बिछाई, चित का चँवर बयारी जी ॥३॥
प्रेम प्रसाद प्रीति पन थारा, थिरता थार सँवारी जी ॥४॥
दया की दालि भाव की भाजी, भक्ति पवन भण्डारी जी ॥५॥
बरी बिराग प्रेक का परवर, कर्म करैला तारी जी ॥६॥
इन्द्री दमन दही घृत बैलन, अचल अचार बिचारी जी ॥७॥
खुरमा खुशी लाज का लड्डू, पूरण पूरी निकारी जी ॥८॥
मन का मोहन भोग रचि डारी, जल्द जलेबी काढ़ी जी ॥९॥
गरी बदाम इलाची किशिमिश, बिविध मसाला डारी जी ॥१०॥
सन्त गुरु सब जेवन लागे, चली ज्ञान गुण गारी जी ॥११॥
निर्मलदास सन्तन का जूठन, मिलै हमारी पारी जी ॥१२॥

३०—(गारी)

जहाँ मन मतिया मारी गई, चलो जगहा बताव ॥टेक॥
खावाँ[1] के आड़े छिबुलिया[2] के ओट, मारै मन मतिया धमक दे चोट ॥ चलो ॥ १ ॥ ई मन मतिया चढ़ी कमान, निशदिन घूमै मारे गुमान ॥ चलो ॥ २ ॥ ई मन मतिया ब्रह्मा को बश कीन, नारद कै पूरा ज्ञान हरि लीन ॥ चलो ॥ ३ ॥ यहि मन मतिया के चीन्है न कोय, पण्डित मोलना गइले बिगोय ॥ ॥ चलो ॥ ४ ॥ काया नगर त्रिकुटिया के बीच, मन मति माँगै साहेब से भीख ॥ चलो ॥ ५ ॥ साहेब कबीर परम परबीन, मनमति के मारि गरद कै दीन ॥ चलो ॥ ६ ॥

१—खावाँ कहिये खानी जाल। २—पच मुद्रा पाँच तत्त्व का प्रकाश ज्योति माया में गुरवा लोग अटकाते हैं इसी का नाम छिबुलिया है।

३१—(भजन)

पच रङ्गिया चुन्दरी हमैं न सोहाय ॥ टेक ॥ पाँच रङ्ग की हमरी चुन्दरिया, सार शब्द से डारो रंगाय ॥ पच ॥ १॥ सद्गुरु[1] घाटे कै निरमल पानी ॥ मलि मलि चुन्दरी डारो धोवाय ॥ पच ॥ २ ॥ चुन्दरी पहिर के गइलि बजरिया सब सन्तन मिल दीन बदलाय[2] ॥ पच ॥ ३ ॥ कहहिं कबीर चुन्दरी न पहिरब, को हमरे नित आवे जाय ॥ पच ॥ ४ ॥

(३२) प्रश्न—शारङ्ग के ३२ नाम कौन २ होते हैं ?

उत्तर—दोहा-शारङ्ग ने शारङ्ग गह्यो, शारङ्ग बोल्यो आय ।
जो शारङ्ग शारङ्ग कहे, शारङ्ग मुँह ते जाय ॥३

अर्थ—मोर ने साँप को पकड़ा और बादल गर्जा, जो मोर अपनी बोली बोले तो साँप मुह से निकल कर भागे (कहते हैं कि मोर का यह स्वभाव है कि बादल को गर्जते सुनता है तो बहुत खुशी से बोलता है और नाचता है) पु० १ एक राग का नाम, २ मोर, ३ साँप, ४ बादल, ५ मोर की बोली, ६ हरिण, ७ पानी, ८ एक देश का नाम, ९ चातक, पपीहा, १० हाथी, ११ राज हंस, १२ सिंह, १३ कोकिला, १४ एक पेड़ का नाम

१—नौकाल से रहित नौगुण सहित स्वरूपनिष्ठ जो सद्गुरु उनके घट अन्दर का जो पारख विचार रुपी पानी निर्मल है ।

२—पाँच तत्त्व कच्ची, पाँच तत्त्व पक्की यही दो चुन्दरी से पृथक अपना स्वरूप है उसी पर शान्ति होना ही बदलना है और नित्य का आना जाना मिटना हैं सो जानिये ।

१५ कामदेव, १६ कई प्रकार के रङ्ग, १७ भौंरा, मधु मक्खी, १८ धनुष, १९ स्त्री, २० दीपक, २१ वस्त्र, २२ शंख, २३ चन्दन, २४ कपूर, २५ कमल, २६ आभरण, शोभा, सुवर्ण, २७ केश, २८ पुष्प, २९ छत्र, ३० रात्रि, ३१ भूमि, ३२ दीप्ति-प्रकाश, तेज, शोभा।

दोहा-चरण अठारह जीव छः, बोली बोले तीन।
पण्डित सोई सराहिये, जो अर्थ लगावे बीन ॥३६॥

टीका—बिल्ली और मोर की बोली एक में मिलती है। चील्ह और घोड़े की बोल एक में मिलती है। हाथी और हंस की बोल एक में मिलती है इसलिये अठारह चरण और तीन बोल गिनी मानी गयी हैं।

(३३) प्रश्न—कौन २ से पदार्थ मलने से गुण को बढ़ाने वाला होता है? कौन २ को सोते हुये जगाना चाहिये और कौन २ को नहीं जगाना चाहिये?

उत्तर—ऊख, तिल, शूद्र, स्त्री, सोना, पृथ्वी, चन्दन, पान, दही इनका मलना गुण बढ़ाने वाला है।

दोहा-द्वारपाल सेवक पथिक, समय क्षुधातुर पाय।
भण्डारी विद्यार्थी, सोवत सात जगाय॥

साँप, राजा, व्याघ्र, बरैं, बालक, दूसरे का कुत्ता और मूर्ख इन सातों को सोते हुये नहीं जगाना चाहिये।

३४—(गजल)

गुरु भक्ति दान दे दो, सबको परखाने वाले।
अपने शरण में ले लो, भव भय हटाने वाले ॥टेक॥
सुत नारि धन जवानी, त्रै लोक राजधानी।
नश्वर यह ठाट जानी, नहिं काम आने वाले॥ गुरु १॥
पाँचो विषय के वश में, सुख ध्यास वश बन्धा हूं।
उस ध्यास को जला दो, सोते जगाने वाले॥ गुरु २॥
कोइ ईश ब्रह्म देवी, कोई भूत प्रेत सेवी।
अनुमान सब छुड़ा दो, बीजक पढ़ाने वाले॥ गुरु ३॥
खानी व वाणि धारा, तिस से बचा के जन को।
निज पद में थिर करो हे, कब्बीर कहाने वाले॥ गुरु ४॥
हैं प्रेम दास दीना, जो कछु खता यह कीना।
तिसको क्षमो प्रवीना, गुरु लाल परखाने वाले॥ गुरु ५॥

३५—(भजन)

जब लग सत्य न आवे तन अपने॥ टेक॥

करि अस्नान पूजा पर बैठे, माला लागे जपने।
भाव भजन कै मरम न जाने, क्या माला के जपने॥ जब॥१॥
गृही रहे दया न चीन्हे, चले तीर्थ पग अपने।
पापी ह्वै के जल में पैठे, जीव लगे सब कपने॥ जब॥ २॥
धुनी रम्हाय जंगल में बैठे, चहुँदिस लागे तपने।
जीव मरैं हत्या तुम्हें लागे, क्या धूनी के तपने॥ जब॥ ३॥

सत्य वही अविनाशी चेतन, घाटि बाढ़ि नहिं घिसने।
कारज बड़ा देह बनि बिगड़े, असत्य जानि लो सबने॥ जब॥ ४॥
परमाणु चार तत्त्व के जितने, अखण्ड सरूप से अपने।
जड़ चेतन दो वस्तु अनादी, सदा रहैं नहिं मिटने॥ जब॥ ५॥
पढ़ा पढ़ाया सुगा एक पाला, लागे पोथी बचने।
कहहिं कबीर खोज वह अक्षर, जे कर्ता के रचने॥ जब॥ ६॥

(३६) प्रश्न—चार वर्ण का विवरण कैसे हुआ?

उत्तर—(कव्वाली)।

मनूँजी तुमने वर्ण बनाया चार॥ टेक॥

जादिन तुमने वर्ण बनाया न्यारे रङ्ग बनाया क्यों न।
गोरे ब्राह्मण लाल क्षत्री पीले वैश्य बनाया क्यों न॥
शूद्र बनाते काले वर्ण के पीछे पैर लगाया क्यों न।
पाँच तत्व गुँण तीन बराबर ज्यादा तत्त्व लगाया क्यों न॥
एक चूक बड़ी भारी पड़ गई न्यारे देश बसाया क्यों न।
लोहे-लोहे के बर्तन में कञ्चन के पानी दिया ढार॥ मनूँजी॥१॥
ब्रह्मा के चार मुख कहते चारो मुख दिखलाओ क्यों न।
जो तुम होड़ करो सन्तन से उनके चिन्ह बतावो क्यों न॥
हठ धर्मी दो छोड़ पोप जी न्याय के अन्दर आओ क्यों न।
झूठा लेखा लिख्यो पोप जी तुमने भारत दिया बिगाड़॥मनूँजी॥२॥
ब्राह्मण कहते मुख से पैदा मुख की राह फिर आये क्यों न॥
क्षत्री कहते भुजा से पैदा भुजा फाड़ फिर आते क्यों न
वैश्य कहते कमर से पैदा कमर फाड़ फिर आते क्यों न॥

चारो वर्ण भग द्वारा निकले कहने में शरमायो क्यों न ॥
सत्य कहूँ तो सब जग रूठे झूठन को इतबार ॥ मनूँजी ॥ ३ ॥
ब्राह्मण वही जो ब्रह्म को जाने न जाने तो ब्राह्मण ना ॥
छः कर्म करै मन लाकर ऊँच नींच कछु माने ना ॥
क्षत्री वही जो छाया राखै नाहीं तो वह क्षत्री ना ॥
जाय लड़े रण खेतन में पीछे कदम हटाये ना ॥
वैश्य वही ब्यवपार सत्य का नहीं तो वैश्य कहावे ना ॥
खेती करै गऊ को पाले बेइमानी पे चित्त धरै ना ॥
झूठा लेखा लिखकर तुमने किया बण्टा ढार ॥ मनूँजी ॥ ४ ॥
परमेश्वर ने बड़े प्रेम से मानुष देह बनाई कीना ॥
इन पोपों ने सात बनाकर ग्रन्थों में लिखवाई कीना ॥
सातों ने छत्तीस बनाकर छूत की प्रथा चलाई कीना ॥
देखो पोप जी की चतुराई सत्य में झूँठ मिलाई कीना ॥
सत्य धर्म का चिन्ह मेट कर घर-घर मूरती पुजवाई कीना ॥
ठाकुर जी का भोग लगाकर सब दुनियाँ भरमाई कीना ॥
छूत छात भारत में लाकर नाश की नींव जमाई कीना ॥
मङ्गलानन्द कह रहे सभा में सब कोई करो विचार ॥मनूँजी॥५॥

३७—(शब्द)

अब बैकुण्ठ कहाँ है भाई ॥ टेक ॥ कितना ऊँचा कितना नीचा कितना है चौड़ाई ॥ भरमत पंछी राह न पावे, कौने महल का जाई ॥ अब ॥ १ ॥ कोई हिन्दू कोई तुरुक बने हैं

कोई ब्राह्मण बनि आई ॥ मिटा स्वांग जब तजा पीजरा, एक बरण होइ जाई ॥ अब ॥ २ ॥ कोरे करवा जल भर लावें, अगिन दिया परचाई ॥ लेके उतरे मगहर घाटे, औघट घाट नहाई ॥ अब ॥ ३ ॥ कोइ कोइ पहुँचे ब्रह्मलोक ले, फिर माया गढ़िलाई ॥ डार दिहिस जम काल के फन्दे, फिर फिर गोता खाई ॥ अब ॥ ४ ॥ बाँधी गाय कबीरा[1] छोरैं ले गंगा नहवाई॥ झारि अँगोछा आँसू पोछै, चेरा खाव मोर भाई ॥ अब ॥ ५॥ औंधे आवा औंधे जाई औंधे जग पतियाई ॥ कहहिं कबीर औंधे[2] की बानी, मारग नाहिं सुझाई ॥ अब ॥ ६ ॥

३८--(कीर्तन चेतावनी)

मन तू सद्गुर सद्गुर बोल ॥ टेक ॥ अन्दर गर्भ के आया जब तू, दुख भारी ब्याकुल था तब तू। बन्धो पोटरिया गोल। मन तू सद्गुर सद्गुर बोल ॥ १ ॥ प्रकट हुआ दुनियाँ में आया, ममता माया मोह फँसाया। बजत बधाई ढोल। मन तू सद्गुर सद्गुर बोल ॥ २ ॥ बालापन सब खेल गँवाया, ज्ञान भया ज्वानी मद छाया। सब तन डाला घोल। मन तू सद्गुर सद्गुर बोल ॥ ३ ॥ शिथिल अंग बूढ़ापन आया, फूटे नेत्र न कान सुनाया। चलते राह टटोल। मन तू सद्गुर २ बोल ॥ ४ ॥ यक दिन कूँच का डंका बाजा, सोंटा हनि

१—अज्ञानी जीव गुरवा लोग पण्डा ने गऊ छुवा कर भवसागर पार भेज रहे हैं। २—औंधे कहिये गुरवा लोग जो नौकाल या सात काल में खुद फँसे हैं औरों को उसी में फँसाते हैं।

मारैं यमराजा। पाप किया बे तौल। मन तू सद्गुर २ बोल ॥ ५ ॥ प्राण गये ठटरी बँधवाई, ले चलो ले चलो कर रहे भाई। उम्र गई अनमोल। मन तू सद्गुरु २ बोल ॥ ६ ॥ धरी लाश शमशान अखाड़े, आगि लगा देखत सब ठाढ़े। कढ़ी प्रेम की पोल। मन तू सद्गुरु २ बोल ॥ ७ ॥ अलख राम यह चादर झीनी, ओढ़ि ओढ़ि संतन धरि दीन्ही। जिस में जरा न झोल। मन तू सद्गुर सद्गुर बोल ॥ ८ ॥

३९—(पूर्बी धुनि कँहरा)

पच्छिम दिशा एक मोती हो सगरवा, कि तेहि बीचवा, चूनै हंसा एक चिरैया, कि तेहि बीचवा ॥ १ ॥ पूरब दिशा से एक अइले हो बधिकवा, फँसाय न लीन्हों हो, मोती सागर कै चिरैया, फँसाय तू लीन्हों हो ॥ २ ॥ आय गये एक सन्त हो महरमो, छोड़ाय न दीन्हों हो, मोती सागर कै चिरैया, छोड़ाय न दीन्हों हो ॥ ३ ॥ छूटि के आये मोती सागर कै चिरैया, लोभाय न गइले हो, वही माया की नगरिया, लोभाय न गइले हो ॥ ४ ॥ खइले अघइले हंसा सोवैं बे खबरिया, भुलाय न गइले हो, गुरु ज्ञान की गठरिया, भुलाय न गइले हो ॥ ५ ॥ कहहिं कबीर चित चेतो मोरे हंसा, बंधाय न देबै हो, गुरु ज्ञान की गठरिया, बन्धाय न देबै हो ॥ ६ ॥

४०—(कँहरा)

अच्छी चोलिया मोर बनायो हो सुघर दर्जी ॥ टेक ॥ पाँच तत्त्व के कपड़ा मँगायो, सुरति कै सूत लगायो दर्जी ॥

अच्छी ॥ १ ॥ कर्म काटि दुई कल्ली लगाओ, ज्ञान के गोट लगायो दर्जी ॥ अच्छी ॥ २ ॥ दया धर्म दुइ बन्द लगायो, बटन पचीस लगायो दर्जी ॥ अच्छी ॥ ३ ॥ धरम दास की अर्ज वीनती, न्याय रहस्य पहिरायो दर्जी ॥ अच्छी ॥ ४ ॥

४१—(कँहरवा)

सुन्दर देहिया है न काम हो भजनियाँ बिना राम ॥ टेक ॥ पैदा लिहौ खबर नहि तन को, मलै मुत्र लपटान ॥ परबस परे रह्यो पलङ्ग पर, भोग्यो है कष्ट तमाम ॥ हो ॥ १ ॥ ज्वान भयो तब इत उत ताकेव, मानो कछू हेरान ॥ मात पिता सब देखन लागे, भइया के सतावे लागे काम ॥ हो ॥ २ ॥ ब्याह किहौ नारी घर लायो, भूलि गयो गुरु ज्ञान ॥ मात पिता को लातन मारयो, मेहरी के भयो गुलाम ॥ हो ॥३॥ वृद्ध भये तन काँपन लागे, कोई न आवत काम ॥ सेवा दास विचारि कहत हैं, छूटि गये धन धाम ॥ हो ॥ ४ ॥

४२—(कँहरवा)

गइले गँजवा मा बिलाई मोर बलमवाँ लहरी ॥ टेक ॥ बहुत भाँति हम तुम्हें समझावा, कहा न मान्यो मोर ॥ सुबह शाम गैर के द्वारे बैठे दम्म लगाई ॥ कमवाँ मिट्टी में मिलाई ॥ मोर ॥ १ ॥ मुर्ती गांजा लाय के, दिन्हों चिलम चढ़ाई ॥ पी के नशा मौन होइ बैठे, आप गये बौराई ॥ सगरी देहिया का जलाई ॥ मोर ॥ २ ॥ माय बाप की तरी तूमड़ी, पी कर दिहौ

उड़ाई ॥ माँगे कर्ज कहीं न पावें, गहना गिरौं धराई ॥ मुइयाँ सेंतिन माँ गँवाई ॥ मोर ॥ ३ ॥ कहहिं कबीर सुनो हो अमली, अब से चेतो भाई ॥ जहां तक अमल हराम लिखे हैं, छोड़े छुटिहैं काई ॥ नाहीं पछ्ना का पछिताई ॥ मोर ॥ ४ ॥

४३—(कँहरवा)

सजनी सजि कै चलो ससुरे तोर सजनवां करिहैं प्यार ॥ टेक ॥ सोनापति बसैं मोरे नगरी, हरे[1] रंग लागी बजार ॥ असली गहना अंग में पहिनो, नकली धरो उतार ॥ सजनी ॥ ॥ १ ॥ क्षमा के छन्दी प्रेम पहुँचिया पारख पद के हार ॥ कर्म के कँगना सँग में जइहैं, दुइ कर करत विहार ॥ सजनी ॥ ॥ २ ॥ दया के दुलरि पहिन के दूल्हन, शील कील छबिदार ॥ ज्ञान के चोलिया गोरी पहिने, टिकुली टेक लिलार ॥ सजनी ॥ शौच[2] केश सन्तोष घाँघरा, कीर्ति कड़ा पै जार ॥ शम[3] की सारी सिर से ओढ़े, भरम के घूँघट टार ॥ सजनी ॥ ४ ॥ नीति के नथुनी पहिन नाक में, लव के लटकन डार ॥ जोशन यश विचार के बेन्दी, धरम की मुन्दरी धार ॥ सजनी ॥ ५ ॥ कहहिं कबीर सुनो भाई साधो, कुमति का धरो उतारि ॥ सत्य के सुरमा नयन लगावो, आवागमन निवार ॥ सजनी ॥ ६ ॥

१—शुभाशुभ गुण या कच्ची पक्की तत्त्वन का हरे रंग बजार लगी है।

२—मन इन्द्रियों को बुरे कर्मों से हटाने का नाम शौच है।

३—मन को विषय बुराइयो से हटाने का नाम शम और शांति है।

४४—(भजन)

गइ झुलनी टूटि[1] दगा होइ गे बालम ॥टेक॥ अस झुलनी अब फेरि न बनिहैं, हमसे सोनरवा[2] से गइ यारी छूटि ॥ ॥ दगा ॥ १ ॥ पाँच पचीस बसैं घट भीतर, आपस में पुनि होइगे फूटि ॥ दगा ॥२॥ अबहीं चेतौ सबेरे भजन[3] करो, नाहीं पकरि जम डरिहैं कूटि ॥ दगा ॥ ३ ॥ कहहिं कबीर सुनो भाई साधो, कपट गाँठि नहिं अजहूँ छूटि ॥ दगा ॥४॥

४५—(शब्द)

अवधू अमल करै सो गावे ॥ जब लग अमल असर न होवे, तब लग परख न आवे ॥ प्रेम नेह आनन्द को छोड़ै, तब निज घर वह पावे ॥ अवधू ॥ १ ॥ बिन फल खाये स्वाद बखानै, कहत न शोभा आवे ॥ बिन गुरु ज्ञान गाँठि कै हीना, नाहक बस्तु मोलावे ॥ अवधू ॥ २ ॥ आँधर हाथ लिहे कर दीपक, करि प्रकाश दिखावे ॥ औरे न आगे करै चान्दनी, आप अंधेरे में जावे ॥ अवधू ॥३॥ आंधर आप आंधर दस गोहने, जग में गुरु कहावे ॥ मूल वस्तु की खबरि न जानै, औरेन को भरमावे ॥

१—जीव मुख, जीव कहता है हे प्रभू यह न देह रूपी झुलनी अब मिलना दुर्लभ है सो विषय परपंच में दम (स्वाँसा) टूटि गई दगा हुई यानी भूलि हुई।

२—चैतन्य जीव ही सोनरवा है।

२—नौकाल के विषय से भागने व कबीर साहेब ऐसा रहस्य धारण करने का नाम भजन है, राम कबीर खुदा ईश्वर गाड रटने का नाम भजन नहीं, सो जानिये।

॥ अवधू ॥४॥ लै अमृत मूरख रेंड़ सींचै, कल्प वृक्ष बिसरावे ॥ लेकर बीज ऊसर में बोवे, पाहन पानी नावैं ॥ अवधू ॥ ५ ॥ लागी आग जरै घर आपन, मूरख घूर बुझावे ॥ पढ़ा लिखा जो पण्डित भूलै, ताको को समझावे ॥ अवधू ॥६॥ कहहिं कबीर सुनो भाई साधो, यह सन्तन नहिं भावे ॥ है कोई शूर पूर यहि जग में, जो यह पद अरथावे ॥ अवधू ॥७॥

४६—(शब्द)

जग में कठिन भक्ति है भाई ॥ टेक ॥

मन कै सांप मदन कै बीछी, केहिका न धरि खाई ।
को है उबरनहार जगत में, शब्द बेद गोहराई ॥ जग ॥१॥
मोह कै नकवा घाट घाट पर, क्रोध सिंह बरियाई ।
इनका मारि अमर होय बैठे, निरभय मुल्क चेताई ॥ जग ॥२॥
काम कै कुतूवा निस दिन भूँकै, सोवत देय जगाई ।
इनकी काटि पीर है न्यारी, भूँकि भूँकि मरि जाई ॥ जग ॥३॥
कहहिं कबीर यह कुमति बिलरिया, बांधा बिरले पाई ।
दूध मलाई खाय जात है, घिया कहाँ से आई ॥ जग ॥४॥

४७—(शब्द)

मारग में लूटिन पाँचों जनी ॥ टेक ॥

आड़ा त्रिष्णा नदिया बहै, जहां जीव न जाय तरी ।
पण्डित ज्ञानी रहे भुलाने, माया चमकै स्याह अनी ॥ मारग १
पांच पचीसा रोकै घाटा, जीव न छाड़ै आपन बाटा ।
साधु चढ़िगे गुरु के मारग, माया मोह सब छाड़ि तनी ॥ मारग २

बन मा लूटे जोगी नागा, बचै न पावें सब का टाँगा।
काम क्रोध त्रिष्णा के मारे, अद्‌बुद घेरे काल अनी ॥ मारग ३
शंकर लूटे नेजा धारी, रइयत उनकर कौन बिचारी।
भूला जीव गर्भ न छूटे, कैसे जीतै काल अनी ॥ मारग ४
इन्द्र बिगारी गौतम नारी, कुबजा लैगा कृष्ण मुरारी।
सीता हरण रावण कीन्हा, राम चन्द्र से नाहीं बनी ॥ मारग ५
कहहिं कबीर सुनो धर्म दासा, जगत ब्रह्म कै छोड़ो आशा।
निजपद गहै वहै सुखदाई, सद्‌गुरु पायो आप धनी ॥ मारग ६

४८—(शब्द)

सद्‌गुरु मिले रंगरेज चुन्दरि मोरी रंग दीनी ॥ टेक ॥
स्याही[1] के रंग छोड़ाय के, दिया मजीठा[2] रंग।
धोये से छूटे नहीं, दिन दिन होय सुरंग ॥ चुन्दरि १
भाव के कुण्ड न्याय के जल में, परख रंग दी बोर।
यश के चसक लगाय के, खूब बनी झकाझोर ॥ चुन्दरि २
सद्‌गुरु ने चुन्दरी रंगी, सद्‌गुरु सन्त सुजान।
वे सन्तन पर सरबस अरपौं, तन मन धन औ प्राण ॥ चुन्दरि ३
कहहिं कबीर रंगरेज गुरु हैं, हम पर भये दयाल।
चटक चुन्दरिया ओढ़िके, मँगन भयो मस्तान ॥ चुन्दरि ४

१—चोरी, हिंसा, व्यभिचारादि स्याही रंग है।
२—पारख गुण चेतन गुणी मजीठा है रहस्य रहनी रूपी रंग चढ़ाया।

४६—(कीर्तन)

जिन्दगी की सफर तै न कीना अगर, आयु ढल जाय तेरी तो मैं क्या करूँ ॥ टेक ॥ देव दुर्लभ जो नर तन मिला आज है, मोक्ष का द्वार तेरे खुला साफ है। भोग विषयों में पड़ कर अगर रह गया, त्याग अमृत पिया विष तो मैं क्या करूँ ॥ १ ॥ भोग विषयों में पड़ के सदा रत रहे, गौर कर जान ले भी सो रङ्ग ढह रहे, गहले गुन्जा अगर छोड़ पारस मणी, याद फिर भी न आया तो मैं क्या करूँ ॥ २ ॥ लख चौरासी से जब जब खड़कता रहा, काल कर्मों में पड़ के भटकता रहा। साँच सद्‌गुरु मिले मूल परखाय के, कर कृपा न तू अपनी तो मैं क्या करूँ ॥ ३ ॥ पार भव के लिये देह नइया तेरो, बात सच मान ले सद्‌गुरु खेवइया तेरो। रूप निज आतमा का जो है देह में, पियारे उसको न जाना तो मैं क्या करूँ ॥ ४ ॥

५०--(गजल)

जब तलक विषयों से ये दिल दूर हो जाता नहीं।
तब तलक साधक विचारा सत्य सुख पाता नहीं ॥ टेक ॥
जो नहीं एकाग्र कर सकता है अपनी वृत्तियाँ।
उसको स्वप्ने में भी परमातम नजर आता नहीं ॥ १ ॥
क्या हुआ बेदों के पढ़ने से न पाया भेद को।
आतमा जाने बिना ज्ञानी तो कहलाता नहीं ॥ २ ॥
पाप कर्मों से सदा रहता है जिसका मन मलीन।
उसके सद्‌उपदेश यह हरगिज हृदय भाता नहीं ॥ ३ ॥
ध्यान से इसको सुनो जो कह रहे हैंगे कबीर।
है बिना सद्‌गुरु के कोई, मुक्ति का दाता नहीं ॥ ४ ॥

५१--(भजन ध्वनि ईमन)

दुनियाँ से जिसने दिल को हटाया किसी तरे ।
माया के बश में फिर ना वो आया किसी तरे ॥ टेक ॥
कहने को सभी कहते हैं कि हम भी विरागी ।
देखा तो उनमें त्याग न पाया किसी तरे ॥ १ ॥
लाखों में सन्त कोई, जो देखि कै नहीं ।
कञ्चन औ कामिनी में लुभाया किसी तरे ॥ २ ॥
पण्डित जो पढ़ि के पोथियें, औरों को सुनाते ।
खुदही हृदय न ज्ञान, समाया किसी तरे ॥ ३ ॥
कथि के पुराण भागवत ईश्वर के भेद को ।
ऋषियों ने भी न ठीक जनाया किसी तरे ॥ ४ ॥
वक्ता जो धर्म शास्त्र के मन्वादि हो गये ।
आपुस में जुदा गीत है गाया किसी तरे ॥ ५ ॥
वेदों के अर्थ का भी यही हाल पाया है सबने ।
अपने ही मत की तरफ झुकाया किसी तरे ॥ ६ ॥
ऐसा जहाँ में कौन जो सत्पन्थ बतावे ।
पर हाँ ! कबीर ने तो लखाया किसी तरे ॥ ७ ॥

५२--(राग श्याम कल्याण)

मोको कहाँ ढूँढ़े बन्दे, मैं तो तेरे पास में ॥ टेक ॥
ना तीरथ में ना मूरति में, ना एकान्त निवास में ।
ना मन्दिर में ना मस्जिद में, ना काशी कैलाश में ॥ १ ॥

ना मैं जप में ना मैं तप में, ना मैं वरत उपास में।
ना मैं क्रिया-कर्म में रहता, नहीं योग संन्यास में ॥ २ ॥
नहीं प्राण में नहीं पिण्ड में, ना ब्रह्माण्ड आकाश में।
ना मैं भृकुटी भँवर गुफा में, ना स्वाँसन के स्वाँस में ॥ ३ ॥
खोजी होय तुरत मिल जाऊँ, इक पल की तलाश में।
कहहिं कबीर ठहर पद अपने, मैं तो हूँ नैराश्य में ॥ ४ ॥

५३—(भजन राग असावरी)

साधो भाई जीवत ही करु आशा।
मुये मुक्ति गुरु कहैं स्वार्थी, झूठा दे विश्वासा ॥ टेक ॥
जीवत समझे, जीवत बूझे, जीवत ह्वै भ्रम नाशा।
जियत मुक्त जो भये मिले तेहिं, मूयेहु मुक्ति निवासा ॥ १ ॥
मन ही से बन्धन मन ही से मुक्ती, मन ही का सकल विलासा।
जो मन भयो जियत वश में नहिं, तो देवै बहु त्रासा ॥ २ ॥
जो अब है सो तबहूँ मिलिहैं, ज्यों स्वपने जग भासा।
जहाँ आशा तहाँ वासा होवे, मन का यही तमाशा ॥ ३ ॥
दूर दूर ढूँढ़ै मन लोभी, मिटे न गर्भ तरासा।
साधु सन्त की करै न बन्दगी, कटै न कर्म की फाँसा ॥४॥
सत्य कहै सद्गुरु को चीन्है, सत्य में सत विश्वासा।
कहहिं कबीर मुक्ति सोई होवे, जो तजै इत उत आशा ॥ ५ ॥

५४—(भजन)

सहज न जान्यो साँई के प्रीति ॥ टेक ॥ हम जानी साहेब हमहीं से राजी, हमै यस कितनों गावें गीत ॥ सहज ॥ १ ॥

बहुत दुलार मूड़ के चढ़ना, बहुत मिठाई में परिगे कीर ॥ २ ॥ बहुत रहे विरले ठहराने, कपटी भागे बिन प्रतीति ॥सहज॥ ३ ॥ कहहिं कबीर सुनो भाई साधो, सेवो सन्त तब होइहैं जीत ॥ सहज न जान्यो साँई के प्रीत ॥ ४ ॥

५५--(प्रभाती)

मोर सुरति सोहागिन जागुरे ॥ टेक ॥ जागु जतन करि अचल रतन धन, गुरु के चरण चित लाव रे ॥ मोर ॥ १ ॥ क्या परी सोवो मोह खोह में, उठिके भजन में लागुरे ॥ मोर ॥ २ ॥ सोवत तोहिं बहुत दिन बीते, का तोरे मूठि में लागुरे ॥ मोर ॥ ३ ॥ दोउ कर जोरि शीश धरूँ चरणन, भक्ति अमर वर माँगु रे ॥ मोर ॥ ४ ॥ दे चित शब्द सुनो दुनौ श्रवन, उठत मधुर धुनि राग रे ॥ मोर ॥ ५ ॥ कहहिं कबीर सुनो भाई साधो, जक्त पीठ दे भागु रे ॥ मोर ॥ ६ ॥

५६--(दादरा)

सुरति पर बिरहिन मारै नजारा ॥ टेक ॥ ब्रह्मा का मारिस, विष्णू का मारिस, शिव का मारिस, दै के किवाड़ा ॥ सुरति ॥ १ ॥ पारासर जल धार में मारिस, नारद धरि फटकारा ॥ सुरति ॥ २ ॥ नीमी ऋषि बन भीतर मारिस, करिके सोरहो सिङ्गारा ॥ सुरति ॥ ३ ॥ कहहिं कबीर सुनो भाई साधो, बचिगे कोई सद्गुरु के प्यारा ॥ सुरति ॥ ४ ॥

५७—(दादरा)

सजन बिन सखिया फिरत दिवानी ॥ टेक ॥
वेद पुरान कुरान में अरुझी, सुन सुन नाना बानी ॥ सजन ॥१॥
भरि भरि थार सोहारी परोसैं, पूजैं पाथर पानी ॥ सजन ॥२॥
अश्चल साज सुभग बर माँगै, हो प्रसिद्ध भवानी ॥ सजन ॥३॥
दारुन द्वन्द विपति को टारे, बिन प्रकाश गुरु ज्ञानी ॥ सजन ॥४॥

५८—(प्रभाती)

दिन रात मुसाफिर जात चला ॥ टेक । जिसको चलना बाट सबेरे, ते क्यस गाफिल रहत परा ॥ दिन ॥ १ ॥ चलना शहर कै कौन भरोसा, छिन में होत है अजब कला ॥ दिन ॥ २ ॥ न गुरु भक्ति न साधु के सेवा, देहिया धरे कै एही फला ॥ दिन ॥ ३ ॥ कहहिं कबीर सुनो भाई साधो, करिहो भजन तब रहिहो भला ॥ दिन ॥ ४ ॥

५९—(भजन)

गुरु बिन जइहौं कौने बाटी मन पाहुना ॥ टेक ॥
यहाँ तो हिन्दू तुरुक बने हैं, बीच लगाये टाटी ।
स्वासा उनके स्वर्ग सिधारे, माटी में मिलि गये माटी ॥ मन॥१॥
यहां का सौदा करले बन्दे, आगे विषयी घाटी ।
ना यह सौदा स्वर्ग मिलैगा, ना बनिया के हाटी ॥ मन ॥२॥
राम रोटा करि लो मोटा, पाँच तत्व की गांठी ।
धर्म राज जब लेखा माँगे, त्रिबैनी के घाटी ॥ मन ॥३॥

कहहिं कबीर सुनो भाई साधो, छोड़ो तन की आशा।
यह तन बिनसत देर न लागे, ज्यस पानी बीच बताशा ॥मन॥४॥

६०—(भजन)

सन्तो सो सद्गुरु मोहिं भावै (जो) नयन अलख लखावै ॥टेक
डोलत डिगे न बोलत बिसरे, जब उपदेश दृढ़ावे।
प्राण पूज्य किरिया से न्यारा, सहज समाधि सिखावे ॥ १ ॥
द्वार न रूँधे पवन न रोके, नहिं अनहद अरुझावे।
यह मन जाय जहाँ तहाँ निर्भय, समता से ठहरावे ॥ २ ॥
करम करै निःकरम रहै जो, ऐसो जुगुत लखावे।
सदा बिलास त्रास नहिं मन में, भोग में जोग जगावे ॥ ३ ॥
धरती त्याग अकाशहु त्यागे, अधर मड़ैया छावे।
शून्य शिखर के सार शिला पर, आसन अचल जमावे ॥ ४ ॥
भीतर रहा सो बाहर देखै, दूजा दृष्टि न आवे।
कहहिं कबीर ऐसा हो हंसा, आवा गमन मिटावै ॥ ५ ॥

६१—(भजन)

सन्तो ! सन्त विलग किन कीन्हा।
लोक लाज कुल की मर्यादा, सबहि त्यागि निज दीन्हा ॥टेक॥
जात पाँति के गर्व भुलाने, सो नर काल अधीना।
निज स्वरूप चीन्हा नहिं मूरख, ताते दुबिधा कीन्हा ॥ १ ॥
तुलसी ब्राह्मण अति कुलीन जग, सब कोइ कहै प्रवीना।
भाना जी भङ्गी के बालक तासु प्रसादी लीना ॥ २ ॥

ना मानो तो साखि बताऊं, और सुनहु मति हीना।
सुपच भक्त रैदास के अन्तर, प्रभु ने करयो कबीना ॥ ३ ॥
सेवरी कौन कुलीन हती जिन, चाखि चाखि फल बीना।
सो प्रसाद पावत प्रभु मन में, शङ्का तनक करीना ॥ ४ ॥
कहहिं कबीर सोई उत्तम जो, भूले भक्ति घरीना।
जिनके भाव भक्ति उर में नहिं, सो नर नीच मलीना ॥ ५ ॥

६२—(भजन)

अवहीं नाहीं गुरु कै बच्चा, अवहीं कच्चै रे कच्चा ॥ टेक॥
गुप्त होय सो प्रकट होवे, गोकुल मथुरा काशी।
पवन चढ़ावे सिद्ध कहावे, होय सूर्य लोक का वासी ॥
तबहूँ नाहीं गुरु कै बच्चा ॥ अवहीं ॥१॥
करि स्नान भभूत चढ़ावे, ब्रह्म अग्नि उद्‌गारैगा।
जल के ऊपर आसन मारै, जो बोलै सो होवेगा ॥
तबहूँ नाहीं गुरू कै बच्चा ॥अवहीं॥२॥
जो कोइ कहै पुरुष अविनाशी, ज्योति सरूप लखावेगा ॥
वेद विधिधि के मारग छानै, तन लक्कड़ करि डारैगा ॥
तबहूँ नाहीं गुरू कै बच्चा ॥अवहीं॥३॥
जोगी होइ के जोग कमावे रोम रोम करि छानैगा।
तीन लोक मा कछू ना छोड़ै, पूरा जोग कमावेगा ॥
तबहूँ नाहीं गुरु कै बच्चा ॥अवहीं॥४॥
एक शून्य को कौन कहावे सात शून्य ले जावेगा।

महा शून्य पर आसन मारै सोहं का घर पावेगा ।।
तबहूँ नाहीं गुरू कै बच्चा ।। अबहीं ।।५।।

जोग भोग से न्यारा होवे, निःअच्छर नहिं भावेगा ।
हद[1] बेहद[2] अजपा[3] से भागै निज स्वरूप घर पावेगा ।।
अब भया गुरू का बच्चा, अब पक्कै रे पक्का ।।६।।

कहहिं कबीर ठहर पद अपने, जो तीन काल नहिं नाशत ।
नाम रूप[4] यस जोड़ा बहुतै, परखत छुटै साँसत ।।
अब भया गुरू कै बच्चा, अब पक्कै रे पक्का ।।७।।

मानुष जनम दुर्लभ है, बहुरि न दूजो बार ।
पक्का फल[5] जो गिर परा, बहुरि न लागे डार ।।
(बीजक साखी ११५)

१—कोई अपने ऊपर दूसरा परमात्मा मान के ओ परमात्मा प्राप्ति के लिये तीर्थ व्रत उपासनादि करना, जोड़ू दाम जमीन जाति, जमात, मेला-ठेला भण्डारा, कल्पना में फँसना इसी को हद्द कहते हैं ।

२—निज स्वरूप को छोड़कर एक ओत-प्रोत व्यापक अद्वैत ब्रह्म भ्रम में फँसना इसी को बेहद कहते हैं ।

३—गले की घाँटी भीतर नाना प्रकार के मन्त्रों का जाप करना अजपा जाप है । दोहा—मुख से जपै दरिद्री, कर से जपै गुलाम । कर जिभ्या दोनों से न्यारा, तिसको मेरा सलाम ।।

४—स्त्री पुरुष, शुभ अशुभ, निर्गुण सगुण, पाप पुण्य आदि ।

५—जो मनुष्य आदि से अन्त तक नौकाल से रहित नौगुण सहित वैराग्य ब्रह्मचर्य को स्वरूप बोध सहित निबाहिता है वही पक्का फल का गिरना है यानी बहुरि करके संसार रूपी डार में नहीं लगैगा ।

६३—(भजन)

पानी में मीन पियासी, मोहिं सुनि सुनि आवत हाँसी ॥टेक॥
आतम ज्ञान बिना नर भटके, कोइ मथुरा कोइ काशी।
जैसे मृगा नाभि कस्तूरी बन बन फिरत उदासी ॥१॥
जल बिच कमल कमल बिच कलिया, तापर भँवर निवासी।
सो मन वश त्रैलोक भयो सब, यती सती संन्यासी ॥२॥
जाका ध्यान धरै बिधि हरिहर, मुनि जन सहस अठासी।
सो तेरे घट माहिं बिराजे, परम पुरुष अविनाशी ॥३॥
है हाजिर तेहिं दूर बतावे, दूर की बात निराशी।
कहहिं कबीर सुनो भाई साधो, गुरु बिन भरम न जासी ॥४॥

६४—(भजन चेतावनी)

करो यतन सखी सइयां मिलन की ॥ टेक ॥ गुरिया गुरवा सूप सुपलिया, तजि दे बुध! लरिकइयाँ खेलन की ॥१॥ देवता पित्तर भुइयाँ भवानी, यह मारग चौरासो चलन की ॥२॥ ऊँचा महल अजब रंग बँगला, सइयाँ की सेज वहाँ लागी फूलन की ॥ ३ ॥ तन मन धन सब अर्पण करि वहाँ, सुरति सँभार पर पइयाँ सजन की ॥ ४ ॥ कहहिं कबीर निर्भय होइ हंसा कुञ्जी बता देऊँ ताला खोलन की ॥ करो ॥ ५ ॥

६५—(भजन चेतावनी)

चेत करो मनुवाँ साँझ होइगे ॥ टेक ॥ भोर भोरहरी बुद्धि लड़िकइयाँ, दोपहर जवानी जोर कइगे ॥ चेत ॥ १ ॥ तीसर

पहर बुढ़ापा आई, माया ठगनिया दाह देंगे ॥ चेत ॥ २ ॥ साँझ भये दिन अथवन लागे, जमराजा कै फाँस परिगे ॥ चेत ॥ ३ ॥ कहहिं कबीर सुनो भाई साधो, कोइ २ सज्जन साँच होइगे ॥ चेत ॥ ४ ॥

६६--(प्रभाती)

जागो हो काया गढ़ के मवासी ॥ टेक ॥ तस्कर के डर बहुत बुरे हैं, अपने पहर उठि जागो हो ॥ काया ॥ १ ॥ काम-क्रोध कै फौज खड़ी है, ज्ञान बन्दूकिया ले दाग हो ॥ काया ॥ २ ॥ सत्य के तोप दया के बख्तर, क्षमा खड़ग ले हाथ हो ॥ काया ॥ ३ ॥ ध्रुव प्रहलाद विभीषण जागे, पाय अचल पद राज हो ॥ काया ॥ ४ ॥ कहहिं कबीर जागना चाहिये, क्या गृही बैराग्य हो ॥ काया ॥ ५ ॥

६७--(प्रभाती)

जागो बहुरिया होइगे भोर ॥ टेक ॥ लख चौरासी रइन तुम सोयो, मानुष तन में होइगे उँजेर ॥ जागो ॥ १ ॥ ऐही उँजेरे में कारज करि लो, नाहीं अन्धेरिया लेहैं घेरि ॥ जागो ॥ २ ॥ करो सत्संग अन्धेरिया मिटावो, छोड़ै चोरौना बखरिया तोर ॥ जागो ॥३॥ करिके विचार ठहर पारख पर, जनम मरण की मिटै दुख घोर ॥ जागो ॥ ४ ॥ जो यह चुरामनि औसर से चुकिहौ, फेरि पछितइहौ चलिहैं न जोर ॥ जागो ॥५॥

६८—(प्रभाती)

सोवत रह्यों भर निंदिया हो, गुरु लिहो जगाय ।। टेक ।।
गुरु के चरन रज अञ्जन हो, लिहो नयन लगाय ।
तासे नीन्द नहिं आवे हो, जियरा अलसाय ।। सोवत १
सुमति के पहिनो गहनवा हो, धरो कुमति उतारि ।
चित्त दै माँग सँवारो हो, दुरमति बिसराय ।। सोवत २
परख पियाला पियायो हो, डारयो बौराय ।
बिरहा बिरथा तन तलफै हो, हमें कछु न सोहाय ।। सोवत ३
निःअक्षर[1] मन माला हो, फेरो[2] हरि श्वाँस ।
साहेब कबीर कै दीहल हो, गावें धर्मदास ।। सोवत ४

६९—(प्रभाती)

जागो हो निन्दिया के माते ।। टेक ।।

जागे से निज लोक बनत है, सोये से दुख होय हो ।।निन्दिया १
की तो जागैं राजा योगी, की चाकर औ चोर हो ।।निन्दिया २
की तो जागैं बिरही तिरिया, जिनके पिया परदेश हो ।।निन्दिया ३
की तो जागैं सन्त बिवेकी, भजन[3] गुरू कै होय हो ।।निन्दिया ४
कहहिं कबीर सुनो भाई साधो, आवागवन नहिं होय हो ।।निन्दिया५

१—क्षर अक्षर निःअक्षर तीन। धर्मदास तुम निज को चीन्ह ।।
२—मन के मानन्दी को फेरो यानी दिल से श्वाँस २ पर हटाते रहो ।
३—नौकाल से रहित गुरु का वचन मानकर चले वही भजन है ।

७०--(भजन चेतावनी)

पाछे समझ परेगा भाई।

जब हरिके हर मुष्टक अइहैं बाँधिहैं मुसुक चढ़ाई ॥टेक॥

अब तो भोग करो इच्छा भरि बहु विधि माँस बनाई।
जेतिक जीव को मारि खातु हो, वहाँ लिखा सब जाई ॥ १ ॥
अभी तो केल करो वेश्या सङ्ग, पातुर भाँड़ नचाई।
दुई पियादा दहिने बायें, पल पल खबरि जनाई ॥ २ ॥
अभी तो पर धन लूट ले आवो, निज स्वारथ की ताई।
चित्रगुप्त जब लेखा मँगिहै, तब सब नौबत आई ॥ ३ ॥
अभी तो निन्दा करो साधुन को, जो तुम्हरे मन भाई।
परग परग पर काँटा शूली, सो फल पइहौ अघाई ॥ ४ ॥
सन्तन सो परदा कछु नाहीं, बोल दिया सच्चाई।
हो होशियार बार जनि लावहु, कहहिं कबीर समुझाई ॥ ५ ॥

७१--(गजल)

डरते रहो यह जिन्दगी बेकार न हो जाय।
स्वप्ने में किसी जीव का अपकार न हो जाय ॥ टेक ॥
पाया है तन अमोल सदाचार के लिये।
विषयों में फँस के तुमसे अनाचार न हो जाय ॥ डरते ॥१॥
सेवा[1] करो सब देश का शुभ काम हरि भजन।

१--काली माई, गङ्गा माई, धरती माई, अगिनी माता, तुलसी माई, आदि जड़ पदार्थों को छोड़कर गऊ माता पुत्र उत्पन्न करने वाली जितने जानदार माता पिता हैं उनको सुख न दे सके तो दुख भी नहीं देना चाहिये सब जीवों को सुख पहुँचाने का नाम भक्ती है।

इतना भी करके तुमको अहंकार न हो जाय ॥ डरते ॥ २ ॥
मञ्जिल असल मुकाम की तै करनी है तुम्हें ।
जग ठग नगर में फँस के, गिरिफतार न हो जाय ॥ डरते ॥ ३ ॥
माधौ लगी है बाजी महामोह जाल की ।
धोखे में पड़के अबकी कहीं हार न हो जाय ॥ डरते ॥ ४ ॥

७२—(प्रभाती चेतावनी)

सोवत बहुत दिन बीता हो जागो मोर मीता ॥ टेक ॥ मानुष तन देवतन का दुर्लभ, तेहिमा सन्त पुनिता हो ॥ जागो ॥ १ ॥ जिनके घर भक्ती नहिं छाजै, तेहि घर कूकुर मूता हो ॥ जागो ॥ २ ॥ यहि घट भीतर पाँच[1] मवासी, तिनका बिरलय जीता हो ॥ जागो ॥ ३ ॥ मन सतसङ्गा कथा प्रसङ्गा, यही में भागवत गीता हो ॥ जागो ॥ ४ ॥ कहहिं कबीर सुनो भाई साधो, सन्त सकल जग जीता हो ॥ जागो ॥ ५ ॥

७३—(भजन)

घर में दुइ दुइ मता गुरु भक्ती कहाँ से होय ॥ टेक ॥
बाहर बड़ी २ बातैं बोले, घर में लिबरी जोय ॥ घर ॥ १ ॥
द्वारे पर बाँचै पोथी भागवत भितरी नौताई होय ॥ घर ॥ २ ॥
भितरी नाउत पूरी बनावे, द्वारे सन्त रहे सोय ॥ घर ॥ ३ ॥
कहहिं कबीर सुनि समझ बूझ ले, मन से डारो झूठ छल धोय ॥ घर ॥ ४

१— पाँच विषय, पंच मुद्रा, पंचकोशादि, मेला, ठेला, नाच, रंग, जवान स्त्री, काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, पाँच माँस के अर्थ मुक्तावली गारी पृष्ठ १८ में देखो यही सब पाँच मवासी हैं।

७४—(भजन)

डगरिया भूलि गई, तुम केहि विधि घर को जाव ॥टेक॥
पन्थ चलत केते दिन बीते ढूँढ़ अनेकन भाव ।
नाना कर्म करत मन हारे, ज्यों मृग जल के धाव ॥१॥
बेद पढ़ि पढ़ि पण्डित भूले, चतुर न पावें ठाँव ।
जेहिं पूँछौ सो नाम बतावे, नाहीं देखावे गाँव ॥२॥
भरम के पन्थ परा जग सारा, कुशल कतहुँ नहिं पाव ।
कहहिं कबीर सुनो भाई साधो ! छोड़ भरम घर[1] आव ॥३॥

७५—(शब्द)

हमै कोई कातन देय सिखाय ॥ टेक ॥

सास ननदिया हिल मिल कातिन, काति परोसिन आय ।
पेउनी पाँच पचीस रङ्ग की, मोरे बूते काति न जाय ॥हमै॥१॥
तन के काते क्या भये, जो मनै काति न जाय ।
जो टेकुवा शोधत बनि आवे, महँगे मोल बिकाय ॥हमै॥२॥
ब्रह्मा कातिन विष्णू कातिन, नारद कातिन आय ।
ब्यास बशिष्ठ दोनों जने कातिन, तबहूँ न काति सिराय ॥हमै॥३॥
बाला काता ज्वानी काता, वृद्धपन काति न जाय ।
कहैं कबीर तीन पन काता, चरखा धरा है उठाय ॥हमै॥४॥

१—नौकाल की आसक्ति बिना छोड़े चैतन्य रूपी घर पर स्थित होना असम्भव है ।

७६—(कँहरा)

महरा हाली नइया लाग्रो, मोर भीजे हो चुन्दरी ।। टेक ।।
पूरब दिशा से उठी बादरी, सार शब्द के बून्दझरी ।। महरा ।।१।।
भवसागर एक नदिया अगम है,लख चौरासी धार भरी ।।महरा।।२।।
सङ्ग की सखी सब पार गई हैं,मैं बौरी यहि पार परी ।।महरा।।३।।
पाँच तत्त्व की हमरी चुन्दरिया,जनम जुगन के दाग परी ।।महरा।।४।।
मलि मलि धोयों दाग न छूटे,साबुन वाले की खोज करी ।।महरा।।५।।
दूल्हन दास भजो साईं जगजीवन,गुरु के चरण में भई उजरी।।महरा।।६

७७—(भजन)

चली मुह चिकनों गङ्गा नहाय ।। टेक ।। सेर भर आटा सवैया भर सतुवा, भतरा के सिर पर लिहिन लदाय ।। चली ।। १ ।। दान करन की रीत न जाने, चारिउ ओर नयना रहीं झमकाय ।। चली ।। २ ।। कपट आड़े सतुआ साने, घूँघट के ओट लिहिन मटकाय ।। चली ।। ३ ।। ईंगुर सेन्दुर टिकुली बैन्दिया अनवट बिछिया लिहिन चोराय ।। चली ।। ४ ।। ईमान नगीना पास न राखें, भाप पुन्य में रगरी जाँय ।। चली ।। ५ ।। ज्ञान रूपी गङ्गा के हाल न जाने, लख चौरासी में गोता खायँ ।। चली ।। ६ ।। कहहिं कबीर बिन गुरु पद चीन्हें, नाम[1] रूप में गईं भुलाय ।। चली ।। ७ ।।

१—निज स्वरूप जो नामी है उसको छोड़कर नाम रूप मिथ्या को बाहर जपते पुकारते ढूंढ़ते है ।

७८--(भजन)

ऐसा रे जनम जरि जाय जग आय के ॥ टेक ॥
गरे गरइयाँ तीन ताग के, बभना कहाय के।
हाड़ माँस वै चूसन लागे, पेटवा फुलाय के ॥ ऐसा १
चौहरि बैठीं मछरी धोवें, मन चित्त लगाय के।
मुर्दा माँस रसोइयाँ लावे, अपना बैठि नहाय के ॥ ऐसा २
बीबी चलीं पीर पूजने, छकड़ा लदाय के।
पूरी पापर अपना खाइन, पर जेरा सन्ताय के ॥ ऐसा ३
पीतर पाथर बहुतै पूजैं, गुरू का बिसराय के।
कहहिं कबीर सुनो हो निगुणा, मरि जइहौ बौराय के ॥ ऐसा ४

७९—(भजन)

मेरे सइयाँ चले गये मैं ना लड़ी ॥ टेक ॥ ना मैं बोली ना मैं चाली, ओढ़ि के चुनरिया अकेली पड़ी ॥ मेरे ॥१॥ घट भीतर मेरे दश दरवाजा, कौन सी रहिया खुली हो रही ॥ मेरे ॥२॥ हमरी सहेली सँग की साथी, ना जानी कुछ उन ने कही ॥ ॥मेरे ॥३॥ पिया निरमोहिया ऐसा बेदरदी, उन से कछु न मेरी चली ॥ मेरे ॥४॥ कहहिं कबीर सुनो भाई साधो, ऐसे पुरुष से नारी भली ॥ मेरे ॥५॥

८०—(भजन रागिनी भैरवी)

गुरू सम को जग में हितकारी ॥ टेक ॥
कलि मल ग्रसित अधम शठ पामर बहु तारयो नर-नारी।
बिरति चर्म तलवार ज्ञान ले, शत्रु अनेक पछारी ॥ गुरु १

हरि माया करि त्रिभुवन फैल्यो, सब दुख महा विकारी ।
रवि कर निकर समान ज्ञान धन, गुरु अज्ञान प्रहारी ॥गुरु२
हरि के कृत जीव जात रसातल, गुरु तेहिं लेत उबारी ।
हरि से गुण है अधिक गुरु के, देखो हृदय बिचारी ॥गुरु३
नारद मुख गुरु निन्दा सुनि हरि, कियौ कोप अति भारी ।
गुरु करुणा निधान एक पल में, चौरासी भय टारी ॥गुरु४
कहि न जात उपकार अनेकन, श्रुति गावत गुण हारी ।
हरि बिरञ्चि शंकर मुख वर्णन, गुरु पद की अधिकारी ॥गुरु५
काल सन्धि झाँई के फन्दा, फैल्यो चहुँदिस भारी ।
सार शब्द से सब परखायो, गुरु कबीर बलिहारी ॥गुरु६

८१—(मङ्गल)

सद्गुरु शब्द कमान ज्ञान गाँसी भई ।
मार्‍यो हिये बिचे बान पीर भारी भई ॥ १ ॥
निश दिन सालत घाव नींद आवे नहीं ।
पिया मिलन की आश नइहर भावे नहीं ॥ २ ॥
सङ्गति वह जरि जाय, चर्चा नहिं ज्ञान की ।
बिन दुलहा के बरात कहौ केहि काम की ॥ ३ ॥
साधु सन्त गुरु देव वहाँ चलि जाइये ।
भाव भक्ति उपदेश वहाँ से लाइये ॥ ४ ॥
जो गुरु रूठे[1] होय तो तुरत मनाइये ।

१—यदि गुरु जी मदिरा मांश नशा चोरी हिंसादि छोड़ाते हों और शिष्य न छोड़ै तो शिष्य को चाहिये कि इतनी पदार्थों को छोड़कर गुरु को मना लावे, रुपया के लिये नाराज हों तो लोभी गुरु को त्याग देवे ।

होइ के दीन अधीन चूक बखशाइये ॥ ५ ॥
जो गुरु होंय दयाल दया दिल हेरिये ।
कोटि कर्म कटि जाय पलक छिन फेरिये ॥ ६ ॥
चढ़ि चलो गङ्गन अटारी[1] तौ आरति साजिये ।
होइगे साहब जी से भेंट तौ मन वारिये ॥ ७ ॥
यह मंगल निज देश हंस मुनि गाइये ।
कहहिं कबीर धर्मदास परम पद पाइये ॥ ८ ॥

८२—(ग़ज़ल सद्गुरु विनय)

शरणों में हम तुम्हारे, हे दीनबन्धु गुरुवर ।
बिगड़ी दशा सुधारो, हे दीन बन्धु गुरुवर ॥ टेक ॥
सुख ध्यास वश बन्धा हूँ, निज पद से मैं गिरा हूं ।
चरणों में तो पड़ा हूँ, हे दीन बन्धु गुरुवर ॥ १ ॥
खूब ज्ञान भक्ति भरदो, साधन तितिक्षा कर दो ।
सब भोग शोग हर लो, हे दीन बन्धु गुरुवर ॥ २ ॥
बच जाऊँ घोर दुख से, खानी व वाणी वन से ।
वह युक्ति सब जँचा दो, हे दीन बन्धु गुरुवर ॥ ३ ॥
यदि जाल सब परखाये, फिर मूढ़ मन लोभाये ।
गो मन विषय खिचाये, हे दीनबन्धु गुरुवर ॥ ४ ॥
कर प्रेम को अब धीरं, वैराग्य में प्रवीरं ।
जय जय कबीर बीरं, हे दीन बन्धु गुरुवर ॥ ५ ॥

१—गङ्गन कहिये अवकाश हृदय के अन्दर, अटारी कहिये अटल पद (चैतन्य) पर शान्ति होना ही आरती साजना व करना है ।

८३—(गजल सद्‌गुरु विनय)

मेरी नइया परी भव सागर में, सद्‌गुरु इसे पार लगा देना।
आधि औ ब्याधि सताय रहे, इनसे प्रभु मोहिं बचा लेना ॥टेक॥
मैं शिष्य आप का कहलाया, कछु कर्म धरम नहिं बनि आया।
करुणा निधान कीजे दाया, मेरे दिल से दोष हटा देना ॥१॥
पापी पतित मलीन हूँ मैं, सब भाँति लचार गरीब हूँ मैं।
साहेब बश तेरे अधीन हूँ मैं, तारो अब चाहे डुबा देना ॥२॥
सत्य ज्ञान प्रदान मुझे कर दो, बल बुद्धि दे निरभय कर दो।
मेरे पापों को परलय कर दो, चरणों में अपने लगा लेना ॥३॥
विनती मेरी पर ध्यान धरो, संकट को मेरे बेग हरो।
मेरा शुद्ध अचार विचार करो, मेरी बिगड़ी दशा को बना देना ॥४॥
दुख हरण आप का नाम भी है, भगवान को आप से काम भी है।
जहाँ कलेश तहाँ आराम भी है, पर इनसे मोक्ष दिला देना ॥५॥

८४--(भजन रागिनी भैरवी)

गुरुसम और कहो को ? दानी।

अति मति हीन दीन शठ तारे, विरद लाज उर आनी ॥टेक॥
बाल्मीक नारद अगस्त मुनि, आदि और बहु ज्ञानी।
गुरु प्रसाद से नीच ऊँच भये, बेद पुराण बखानी ॥ १ ॥
जप तप आदि करैं संयम व्रत, सुनि सुनि नाना बानी।
तदपि न मिटे विना सद्‌गुरु के, चौरासी की खानी ॥ २ ॥

लोक वेद की कर्म धार में, बहे जात अभिमानी ।
त्रिविध दुसह दुख देखि दयानिधि, प्रेरयो परख निशानी ॥ ३ ॥
को ! कबीर गुरु इव करुणामय, वेद वदति इति जानी ।
तद्विज्ञान हेतु शरणागत, गच्छ सकल भ्रम भानी ॥ ४ ॥गुरु सम ॥
चौपाई—गृही होइ के कथे ज्ञान । अमली होइ के धरे ध्यान ॥
साधू होइके कूटे भग । कहहिं कबीर यह तीनों ठग ॥

८५—(मंगल)

साधुसंगति गुरुदेव, वहाँ चलि जाइये ।
भाव भक्ति उपदेश, तहाँ ते पाइये ॥टेक॥
अस संगति जरि जाय, न चर्चा ज्ञान की ।
बिन दुलहा वो बरात, कहो किस काम की ॥ १ ॥
दुबिधा को करि दूर, सन्त गुरु ध्याइये ।
आन देव की सेव, न चित में लाइये ॥ २ ॥
आन देव की सेव भला नहिं जीव को ।
कहहिं कबीर विचार, न पावे वो पीव को ॥ ३ ॥

८६—(मंगल)

सद्गुरु दीन दयाल, काल भय मेटिया ।
पायो दीपक ज्ञान, अमर घर भेटिया ॥ १ ॥
जो कछु देखा चाहो, चलो सतसंग में ।
उनसे करहु स्नेह, मिलो उस रंग में ॥ २ ॥
अविगत अगम अभेद, अखण्डित पूर है ।

झिलमिल[1] झिलमिल होय, सदा बहु नूर है ॥ ३ ॥
इंगला पिंगला साधु यही एक ख्याल है।
चन्द्रभानु गम नहीं, तहाँ मेरो लाल है ॥ ४ ॥
कहहिं कबीर समझाय, समुझ नर बावरा।
हंस गये सत्य लोक[2], उतरि भवसागरा ॥ ५ ॥

८७—(भजन)

सन्तो ! माया तजी न जाई।

सदा एक संग रहत है जैसे बेल वृक्ष लपटाई ॥ टेक ॥
काम तजै तो क्रोध न छूटै, क्रोध तजौ तो लोभा।
लोभ तजै उर आशा बाढ़ै, मान बड़ाई शोभा ॥ १ ॥
गृह त्यागै फिर मढ़ी बनावे, उदय अस्त दे फेरी।
कुटुम्ब छोड़ि शिष्य साखा मूड़ै, ममता बढ़ै घनेरी ॥ २ ॥
देखन को पैसा नहिं छूवै, कौड़ी मिलै न छोड़ैं।
गुरु भण्डारा हेत नाम लै, माँगि माँगि धन जोड़ैं ॥ ३ ॥

१—माया मुख गुरुवा लोग कहते हैं कि इंगला पिंगला नाड़ी साधो यानी स्वाँसा चढ़ाय के झिलमिल झिलमिल (नूर) कहिये प्रकाश को देखो यही सत्यपुरुष है जो कि कोटि सूर्य चन्द्र का प्रकाश एक रोम में है यही सत्य लोक भी माने हैं। सज्जनों ! विचार करो कि एक सूर्य के प्रकाश से तो अनेकों जीव छोटे बड़े मर जाते व घाम सह नहीं सकते तो यह गुरुवा लोग मरने के बाद मुक्ति माने हैं यही धोखा देना है।

२—अखण्डित अपना स्वरूप ही सत्य लोक जानिये।

कर्म संयोग मिलै नहिं जब लौं, तब लौं महा विरागी।
मिले न करि सन्तोष रहे मन, तृष्णा पीछे लागी ॥ ४ ॥
शिष्य समीप पुजावन के हित, सौ यौजन चलि जावैं।
हमें छोड़ि मति और को मानो, यह उपदेश दृढ़ावैं ॥ ५ ॥
सोइ त्यागी जो करै न इच्छा, मिलै द्वेष नहिं मानैं।
कहहिं कबीर सुनो भाई साधो, माया झूठी जानैं ॥ ६ ॥

८८—(भजन)

सन्तों ! जगको को समझावे।

तजि प्रत्यक्ष सद्गुरु परमेश्वर, जड़ पूजन को जावे ॥ टेक ॥
जड़ पूजा के फल अदृष्ट है, कालान्तर से पावे।
दृष्ट अदृष्ट उभय फल दायक, सो पूजा नहिं भावे ॥ १ ॥
लै पाषाण मूर्ति कर से गढ़ि, बहु विधि रूप बनावे।
विष्णु शङ्कर सूर्य गणपति, जो कुछ मन में आवे ॥ २ ॥
दधि घृत पय मधु ले प्रमाण युत, तामें खाँड़ मिलावे।
यहि विधि से करि पंचामृत तेहि, मूरति पर ढरकावे ॥ ३ ॥
पुनि लै विमल वारि सुरसरि को, शुद्ध स्नान करावे।
धोय पोछि चन्दन लगाय कै, पट भूषण पहिरावे ॥ ४ ॥
करी प्रतिष्ठा वेद मन्त्र से, तामें प्राण बुलावे।
जो वे मन्त्र सत्यकर मानै, निज पितु क्यों ? न जियावे ॥ ५ ॥
भोग थार धरि ताके सन्मुख, घण्टा नाँद बजावे।
भोजन कौन करै विन चेतन, उलटि आपही खावे ॥ ६ ॥

यहि विधि करत करत जड़ पूजा, आपहि जड़ बनि जावे।
कहहिं कबीर ज्ञान सद्गुरु का, कैसे हृदय समावे ॥ ७ ॥

८९—(भजन)

सन्तों ! सो निज देश हमारा।
जहाँ जाय फिर हंस न आवै, भवसागर की धारा ॥ टेक ॥
सूर्य चन्द्र तहाँ नहीं प्रकाशत, नहिं नभ मण्डल तारा।
उदय न अस्त दिवस नहिं रजनी, विना ज्योति उजियारा ॥ १ ॥
पाँच तत्व गुण तीन तहाँ नहिं, नहिं तहाँ सृष्टि पसारा।
तहाँ न माया कृत परपञ्च यह, लोग कुटुम परिवारा ॥ २ ॥
क्षुधा तृषा नहिं शीत उष्ण तहाँ, सुख दुःख को संचारा।
आधि न ब्याधि उपाधि कछू तहाँ, पाप पुन्य बिस्तारा ॥ ३ ॥
ऊँच नीच कुल की मर्यादा, आश्रम बरण बिचारा।
धर्म अधर्म तहाँ कछु नाहीं, संयम नियम अचारा ॥ ४ ॥
अति अभिराम धाम सर्वो पर, शोभा अगम अपारा।
कहहिं कबीर सुनो भाई साधो ! तीन लोक से न्यारा ॥ ५ ॥

९०—(भजन ध्वनि ईमान चेतावनी)

प्रभु के चरण में ध्यान लगाया करो कभी।
परलोक अपना कछु तो बनाया करो कभी ॥ टेक ॥
आठो पहर परपञ्च में जाते हैं तुम्हारे।
एक पल गुण गुरू का भी गाया करो कभी ॥ १ ॥
आखिर को ये संसार छूट जायगा तुमसे।

तुम भी तो इसको दिल से हटाया करो कभी ॥ २ ॥
लै लै किया है तुमने जमा धन को जोड़ के।
देने को भी कुछ हाथ उठाया करो कभी ॥ ३ ॥
जब तक हृदय में बन सके, तब तक जरा दया।
दुखियों की तरफ देख के, लाया करो कभी ॥ ४ ॥
तृष्णा तो कर रही है प्रबलता से अपना राज।
सन्तोष को भी ठौर दिलाया करो कभी ॥ ५ ॥
माया के वश में पड़ के जो रहता है दिवाना।
इस मन को अपने ज्ञान दृढ़ाया करो कभी ॥ ६ ॥
स्वारथ के लिए तो सदा फिरते हो भटकते।
सन्तों के भी सत्संग में आया करो कभी ॥ ७ ॥
है हित को तुम्हारे ही ये कहना कबीर का।
इसको न अपने दिल से भुलाया करो कभी ॥ ८ ॥

(९१) प्रश्न—कबीर साहेब और गोरख का सत्संग कैसे हुआ ?

उत्तर—गोरख का जन्म पहिले हुआ और कबीर साहेब का जन्म कई वर्ष पीछे हुआ तब सत्संग कैसे हुआ ये शङ्का ? समाधान–गोरख के शिष्य साखा से हुआ होगा ऐसा कह सकते हैं प्रमाण कबीर मन्सूर व श्वास गुन्जार ग्रन्थ का।

भजन

इनमा कौन कबीर कहाई ॥ टेक ॥

अपने घर से चले गोरखा अनहद डँक बजाई।
गाड़ि त्रिशूल शून्य पर बैठे मोजरा करत बुलाई ॥ इनमा ॥

अपने घर से चले कबीरा कुकड़िन सूत मँगाई ।
फेंके सूत गङ्गन चढ़ि बैठे, मोजरा करत बुलाई ।। इनमा ।। २ ।।
कूदे गोरखा जल के अन्दर दादुल रूप बनाई ।
ताको ढूँढन चले कबीरा, टाँग पकड़ि धरि लाई ।। इनमा ।। ३ ।।
कूदे कबीरा जल के अन्दर; जला मई है जाई ।
ताको ढूँढन चले गोरखा, कबीर के अन्त न पाई ।। इनमा ।। ४ ।।
साहेब कबीर खड़े जल अन्दर, गोरख का समझाई ।
छोड़ो ध्यान जाव घर अपने, कबीर के अन्त न पाई ।। इनमा ।।५।।

६२—(सवैया)

सद्ग्रन्थ भूमिका में सार कहा, फिर असार कहाँ जायेगा ।
सार असार को परख लिया, तब आप स्वयं रह जायेगा ।।
अज्ञान अन्धेरा अवस्तु सही, यह ज्ञान प्रकाश से जायेगा ।
पाप पुण्य से अलग भया तब, निज स्वरूप घर पायेगा ।।१।।

प्रश्न गोरख का—

कौन छूरा कौन पानी । कौन मूड़ै निरबान बानी ।।

उत्तर कबीर साहेब का

शब्द छुरा निरञ्जन पानी । गुरु मूड़ै निरबान बानी ।।

प्रश्न गोरख का

आसन बाँधू बासन बाँधू, और बाँधू नौ द्वारा ।
तो को बाधूँ तोरे गुरू को बाँधू, निकसौ कौने द्वारा ।।

उत्तर कबीर साहेब का—

आसन मुक्ता वासन मुक्ता, औ मुक्ता नौ द्वारा।
मैं भी मुक्ता गुरु भी मुक्ता, निकसों दसवें द्वारा॥

प्रश्न गोरख का--

अण्डान मण्डान, चार खुरी दुइ कान। जान तो जान, नाहीं माला टोपी उरे आन॥

उत्तर कबीर साहेब का--

मण्डान धरती, अण्डान आसमान। चारो दिशा चार खुरी, चाँद सूर्य दुइ कान। जान तो जान नाहीं, अबकी बोलो, तो मारूँ थप्पर तान॥ गोरख विनय सहित कबीर साहेब के चरण पर टोपी रख दिया।

दोहा--नौ नाथ चौरासी सिद्ध, इनको अनहद ज्ञान।
अविगत गति कबीर का, ई गति बिरला जान॥
झोली झण्डी कूबरी, शेली सिङ्गी नाथ।
दाया भई कबीर की, चढ़ाया गोरख[1] नाथ॥

जब गोरख हार गया और सब षट दर्शन भेषों का भेष चपरास रह गया, तब नानक आदि विनय करने लगे।

कबीर साहेब के जन्म भये पीछे नानक का जन्म हुआ इनका भी सत्सङ्ग होना सम्भव जानिये।

१—अणिमा, गणिमा, लघिमा, गिरमा, हुताशनी, अन्तरयामिनी, वाचासिद्ध, महिमा।

६३—(भजन)

वाह वाह कबीर गुरु पूरा है ॥ टेक ॥

पूरे गुरुन की मैं बलि जइहौं, जाका सकल जहूरा है ॥वाह॥१॥
पारख से परखायो सकल भ्रम, गोरख ज्ञान अधूरा है ॥वाह॥२॥
हद बेहद अनहद औ अजपा, निज स्वरूप से तूरा है ॥वाह॥३॥
अष्ट सिद्ध नव निद्ध निःअक्षर, निज स्वरूप से कूरा है ॥वाह॥४॥
बन्दीछोर बन्ध सब नाश्यो, नानक चरण के अधूरा है ।.वाह॥५॥

(कबीर साहेब नानक को आशीर्वाद देते हैं)

६४—(भजन)

वाह वाह लड़के जीते रहो ॥ टेक ॥

मेड़वे की रोटी बथुये की भाजी, ठण्डा पानी पीते रहो ॥ १ ॥
यह लड़के की बड़ी २ अँखिया, नित प्रति दरशन करते रहो ॥ २ ॥
शब्द की सुई सुरति का धागा, ज्ञान गुदरिया सीते रहो ॥ ३ ॥
कहहिं कबीर सुनो हो नानक[1], राम[2] रसिक रस पीते रहो ॥ ४ ॥

१—रमन्ते रामः दोहा—

र अक्षर चैतन्य है, म मया पहिचान ।
दुई पद की ताड़ी बजी, संशय बिहंग उड़ान ॥

२—रसिक जीव ही में ज्ञान रस है उसी पर थीर होवो ।

(प्रमाण विश्राम सागर पृष्ठ ८)

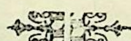
चौपाई—निज स्वरूप सुख लहै हजूरी । यहि उपाय बिन दर्शन दूरी ॥
माया वश स्वरूप विसराया । तेहि भ्रम ते नाना दुख पाया ॥

(रामायण)

९५—(भजन)

तेरी काया में गुलजार, बागों ना जा रे ? ॥ टेक ॥
करनी क्यारी बोय कै, रहनी रखु रखवार ।
कपट को काग उड़ाय के, देखो अजब बहार ॥ १ ॥
मन माली परबोधिये, करि संयम[1] की बार[2] ।
दया वृक्ष सूखे नहीं, सींच क्षमा जल ढार ॥ २ ॥
गुल क्यारी के बीच में, फूल रहा कचनार ।
खिला गुलाबी अजब रङ्ग, गुल गुलाब की डार ॥ ३ ॥
अष्ट कमल से होत है, लीला अगम अपार ।
कहहिं कबीर चित चेत के, आवा गवन निवार ॥ ४ ॥

दोहा—अष्ट कमल दल हिया में, ताको अमित प्रभाव ।
मन बैठे जेहिं पत्र पर, तैसे धरे स्वभाव ॥



१—अहिंसा, सत्य भाषण, सत्य मानना, ब्रह्मचर्य (वीर्य रक्षा) चोरी नहीं करना, सब प्रकार का अभिमान छोड़कर किसी से किसी प्रकार का दान नहीं लेना यही पाँच लक्षण संयम के हैं।

२—संयम रूपी दिन में वर्तना ।

मुद्रक- श्री विश्वेश्वर प्रेस, बुलानाला, वाराणसी ।

❀ ग्रन्थ समाप्ति की श्री सद्गुरु पद वन्दना ❀

दोहा—बोध बयालिस के पढ़े, कढ़े होय भ्रम नाश ।
नित खरसान किये ते, परै न नौ के फाँस ॥ १ ॥
सन्तन के सत्सङ्ग में, जो रहते हर वक्त ।
करि विचार निज रूप की, शम से पूरा भक्त ॥ २ ॥
भक्त मुक्त प्रत्यक्ष लख, भूत भविष्य बहाव ।
मुये मुक्त फिर को कहा, मुझसे आव जनाव ॥ ३ ॥
नौकाल के बंधन जीव ने, सुखहि जान गहि लीन ।
महा दुःख माथे परा, भूल[1] भरम[2] तजि दीन ॥ ४ ॥
छोड़त पकड़त युग गये, पाँच विषय गहि अन्ध ।
नित नाचै नौकाल में, गुरु बिन मिटै न सन्धि ॥ ५ ॥
ताते सद्गुरु शरण में, तन मन अरपा शीश ।
साधु गुरु जे पारखी, ज्ञान रहनि बख्शीश ॥ ६ ॥
गुरु द्वारा बुरहानपुर[3] नाग झिरी स्थान ।
निर्णय कबीर मन्दिर सही, नामीं सन्त रहान ॥ ७ ॥
पूरण, काशी, आदिगुरु, लाल गुरु मम होयँ ।
वर्तमान आचार्य गुरु, रामस्वरुप दुख खोय ॥ ८ ॥
स्वयं सद्गुरु मान्यवर, सब सन्तन शिर मौर ।
रामलाल बन्दत चरण, राखि लिहो निज ठौर ॥ ९ ॥

इति बोध बयालिस नामक ग्रन्थ सद्गुरु की दया से
रामलाल दास द्वारा निर्मित सम्पूर्णम् समाप्त ॥

१—भूल कहिये खानी जाल स्त्री आदि भूल की औषधि पारख है ।
२—भ्रम कहिये ब्रह्मप्रेत बाणी जाल ।
३—बुरहानपुर शहर जिला खण्डवा (निर्माण में है)

